6199

शोधादर्श

~~43~~ 4

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

6292

वैशाली (विहार) में श्री दिगम्बर जैन मन्दिर स्थित

भगवान महावीर की प्राचीन अतिशयकारी

२००० वर्ष प्राचीन गुप्तकालीन पाषाण प्रतिमा

{ वैशाली में बौना पोखर (तालाब) से प्राप्त }

आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
प्रधान सम्पादक : श्री अजित प्रसाद जैन
सह - सम्पादक : श्री रमाकान्त जैन

प्रकाशक :
तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.
पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ- २२६ ००४

णाणं णरस्स सारं- सच्चं लोयम्मि सारभूयं

5 23

शोधादर्श -४३

वीर निर्वाण संवत् २५२७ **मार्च २००१ ई.**

अनुक्रमणिका

१.	गुरुगुण-कीर्तनः वर्द्धमान महावीर	श्री रमाकान्त जैन	१
२.	घुमक्कड़राज महावीर	महापण्डित राहुल सांकृत्यायन	७
३.	Life of Lord Mahavira	Dr. Jyoti Prasad Jain	८
४.	सम्पादकीय : २६०० वां वीर जयन्ति महोत्सव वर्ष	श्री अजित प्रसाद जैन	१२
५.	तीर्थंकर महावीर *	आचार्य श्री विद्यानन्द मुनि	१८
६.	यदि महावीर तीर्थंकर नहीं होते *	आचार्य श्री तुलसी	२०
७.	महापुरुष महावीर *	डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन	२१
८.	महावीर की विशेषता *	संत विनोबा भावे	२१
९.	महावीर और मूक जगत *	आचार्य रजनीश	२२
१०.	भगवान महावीर-जीवन और दर्शन *	मुनि श्री राकेश कुमार	२३
११.	समत्व स्रष्टा भगवान महावीर *	साध्वी अणिमाश्री	२४
१२.	भगवान महावीर *	डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल	२५
१३.	महावीर का धर्म-जनधर्म *	श्री रिषभदास रांका	२६
१४.	वत्स जनपद में महावीर का विहार *	डॉ. शशिकान्त	२७
१५.	कहानी महावीर भगवान की *	श्री हीरालाल 'कौशल'	३०
१६.	अपनी पुरा-सम्पदा की सार-सम्हार कैसे करें		३१

१७. अतीत और वर्तमान में जैन-पत्रिकायें — डॉ. ज्योति जैन — ३४

१८. कटोरी सीधी या उलटी — जस्टिस एम. एल. जैन — ३६

१६. चिन्तन कण :

(१) धर्म का विकृत रूप — श्री सुखमाल चन्द जैन — ४१

(२) मोक्ष नरक -- क्या और कहाँ — श्री धन्य कुमार जैन — ४१

२०. स्मृतियों में हो बने — श्री अंशु जैन 'अमर' — ४३

२१. सामयिक परिदृश्य : क्षणिकाएं — श्री रमा कान्त जैन — ४४

२२. **समाचार विमर्शः** — श्री अजित प्रसाद जैन

धर्म संसद में गणिनी आर्यिका ज्ञानमती जी — ४६

एक और नई भट्टारक पीठ का सृजन — ४८

प्रलयंकारी भूकम्प — ४६

दस माह के पुत्र को दीक्षा हेतु अर्पण — ५२

२३. ज्योतिर्मय ज्योति प्रसाद — श्री विष्णु दत्त शर्मा — ५३

२४. समाचार विविधा — ५४

२५. **साहित्य सत्कार :**

सन्मति तर्क; काव्यानुशासनम्; पंचकल्याण गजरथ समीक्षा;

अनेकांत भवन ग्रंथ रत्नावली; अनेकान्त दर्पण — श्री अजित प्रसाद जैन — ६२

Preservation of Art Objects
and Library Materials;

समाधि दीपक; चिन्तन-मनन-विचार;

आर्यिका, आर्यिका है; मुनि नहीं; रत्नाकर;

चामुण्डराय वैभव; आचार्य श्री मानतुंग,

भक्त कामदेव हनुमान और सुदर्शन स्वामी के चित्र;

श्री शिवशंकरस्तुतिमाला; उद्गार — श्री रमाकान्त जैन — ६५

२६. अभिनन्दन — ७१

२७. शोक संवेदन — ७३

२८. शोधादर्श : पाठकों की दृष्टि में — ७४

२६. आभार — ८६

(ऊपर ❖ चिन्हित लेख व रचनायें श्री महावीर निर्वाण समिति, उ. प्र., द्वारा नवम्बर १६७५ में प्रकाशित एवं डॉ. ज्योति प्रसाद जैन द्वारा सम्पादित भगवान महावीर स्मृति ग्रन्थ से साभार उद्धृत- सं.)

वर्द्धमान महावीर

पणमामि वड्ढमाणं तित्थं-धम्मस्सकत्तारं ।। १।।

- कुन्दकुन्द

(**भावार्थ-** तीर्थ और धर्म के कर्ता (प्रवर्तक) वर्द्धमान को मैं प्रणाम करता हूँ।)

सिद्धत्थराय पियेकारिणीहि कुंडले वीरे।
उत्तर फाग्गुणि रिक्खे चित्तसिया तेरसीए उप्पण्णो ।। २।।

- यतिवृषभ

(**भावार्थ-** कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ और रानी प्रियकारिणी के घर चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को उत्तर फाल्गुण नक्षत्र में वीर प्रभु का जन्म हुआ।)

जिण जन्महो अणुदिण सोहमाण, णिय कुल सिरि देक्खेवि वड्ढमाण।
सिय माणुकलाइ सहुँ सुरेहिं, सिरि सेहर - रयणहि भासुरेहिं।।
दहमे दिणि तहो भव बहु निवेण, किउ वड्ढमाण इउणामु तेण।।३।।

- विवुध श्रीधर

(**भावार्थ-** जिसकी जन्म लेने के उपरान्त दिनोदिन शोभा बढ़ती गई और जिसके जन्म लेने पर कुल की श्री (लक्ष्मी) उसी प्रकार वर्द्धमान हुई जैसे दिन में भानु की कलाओं और रात्रि में चन्द्रमा की कलाओं की श्री (शोभा) बढ़ जाती है, इसलिए जन्म से दसवें दिन उस भवावलि निवारक शिशुरूप प्रभु का नाम वड्ढमाण (वर्द्धमान) रक्खा गया।)

विशाला जननी यस्य विशालं कुलमेव च।
विशालं वचनं चास्य तेन वैशालिको जिनः ।। ४।।

- सूत्रकृतांग टीका

(**भावार्थ-** जिनकी जननी विशाला, कुल विशाल (उच्च) तथा वचन विशाल आशय वाले थे वह जिनेन्द्र प्रभु इन कारणों से वैशालिक कहलाते थे।)

सन्मतिर्महतिर्वीरो महावीरोऽन्त्य काश्यपः।
नाथान्वयो वर्धमानो यत्तीर्थमिह साम्प्रतम् ।। ५।।

- धनञ्जय

(**भावार्थ**- जिनका तीर्थ (धर्मतीर्थ) लोक में सम्प्रति (इस समय) चल रहा है वह सन्मति, महतिवीर, महावीर, अन्त्य काश्यप (काश्यप गोत्रीय), नाथान्वयी वर्द्धमान हैं।)

सो णाम महावीरो जो रज्जं पयहिऊण पब्वइयो।
काम-कोह-महासत्तुपक्ख णिग्घायणं कुणइ।। ६।।

- अनुयोगद्वार सूत्र

(**भावार्थ**- उन्हीं का नाम महावीर है जिन्होंने राज्य वैभव का परित्याग कर प्रव्रज्या (दीक्षा) ली और काम-क्रोध आदि महान शत्रुओं के पक्ष का निग्रह किया।)

निगंठो आवुसो नातपुत्तो सव्वञ्ञु सव्वदरस्सी।
अपरिसेसे णाण दंस्सण परिजानाति ।। ७।।

- मज्झिमनिकाय, भाग-१

(**भावार्थ**- आयुष्मान निगंठ (निर्ग्रन्थ) नातपुत्त (ज्ञातृपुत्र) (भगवान महावीर) सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं। वह अपने अपरिशेष (असीम) ज्ञान-दर्शन द्वारा सब कुछ जानते हैं।)

सो जयइ जस्स केवलणाणुज्जलदप्पणम्मि लोयालोयं।
पुढ पदिबिंबं दीसई वियसिय, सयवत्त गब्भउरो वीरो ।। ८।।

- गुणधर

(**भावार्थ**- जिनके केवलज्ञान रूपी उज्जवल दर्पण में लोकालोक स्पष्ट प्रतिबिंबित हुए दीखते हैं और जो विकसित कमल-गर्भ के समान तप्त वर्णाभ हैं, वह वीर भगवान जयवन्त हों!)

जोहेसु णाए जह वीससेण, पुप्फेसु वा जह अरविंदमाहु।
खत्तीण सेट्ठे जह दंतवक्के, इसीण सेट्ठे तह वद्धमाणे।। ६।।

- सूयगडांग सूत्र

(**भावार्थ**- जिस प्रकार योद्धाओं में वसुदेव श्रेष्ठ हैं, पुष्पों में अरविन्द श्रेष्ठ कहलाता है, क्षत्रियों में दंतवक्री (चक्रवर्ती) श्रेष्ठ कहलाता है उसी प्रकार ऋषियों में वर्द्धमान श्रेष्ठ माने जाते हैं।)

जयइ जगजीवजोणी-वियाणओ जगगुरू जगाणन्दो।
जगणाहो जगबन्धू जयइ जगप्पियामहो भयवं।।
जयइ सुयाणंपभवो, तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ।
जयइ गुरूलोगाणं, जयइ महप्पा महावीरो।। १०।।

- नन्दी सूत्र

(**भावार्थ-** जगत् की समस्त जीव योनियों के ज्ञाता, जगत् गुरु, जगत् को आनन्द देने वाले, जगन्नाथ, जगत् बन्धु, जगत् पितामह, भगवान, श्रुतज्ञान (द्वादशांग वाणी) के ज़नक, तीर्थंकरों में अपश्चिम (अन्तिम), लोकगुरु महप्पा (महात्मा) महावीर की जय हो!)

ण पेम्मे णिसण्णो महावीर-सण्णो।
तमीसं जईणं जए संजईणं।।
दमाणं जमाणं खमा संजमाणं।
उद्दाणं रमाणं पबुद्धत्थ-माणं।।
दया-वड्ढमाणं जिणे वड्ढमाणं।
सिरेणं णमामो।।११।। -पुष्पदन्त

(**भावार्थ-** प्रेम में निस्संग (विषय-वासना में अनासक्त) महावीर हमारे लिये शरण हैं। उस इन्द्रियजयी संयमी ईश की जय हो! दम, यम, क्षमा, संयम के धारक, अभ्युदय एवं निःश्रेयस रूप उभय लक्ष्मी में रमण करने वाले, सम्पूर्ण तत्त्वार्थ के ज्ञाता तथा वृद्धिंगत दयावान वर्द्धमान जिनेन्द्र को हम मस्तक झुकाकर नमन करते हैं !)

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।। १२।।

- समन्तभद्र

(**भावार्थ-** जिन्होंने अपनी आत्मा से कर्ममल धो डाला है और जिनकी विद्या (ज्ञान) में अलोकाकाश सहित तीनों लोक दर्पणवत् प्रतिबिंबित होते हैं उन श्री वर्द्धमान को नमस्कार!)

नमो नमः सत्त्वहितंकराय, वीराय भव्याम्बुजभास्कराय।
अनन्तलोकाय सुरार्चिताय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय।। १३।।

- पूज्यपाद देवनन्दि

(**भावार्थ-** समस्त प्राणियों का हित करने वाले, भव्य रूपी अम्बुजों (कमलों) को सूर्य के समान प्रफुल्लित करने वाले, अनन्त लोक को देखने वाले, सुरों (देवों) द्वारा अर्चित (पूजित), देवाधिदेव वीर जिनेन्द्र को बारम्बार नमस्कार!)

संसार दावानल दाह नीरं
संमोह धूलीहरणे समीरम्।
मायारस दारण सार सीरं
नमामि वीरं गिरिसार धीरम्।। १४।।

- हरिभद्रसूरि

(**भावार्थ-** संसार रूपी दावानल की दाह (ज्वाला या जलन) को शान्त करने के लिए नीर (जल) के समान, सम्मोह रूपी धूल को उड़ाने के लिए समीर (हवा) के समान, माया के रस को सोखने के लिए सीर (सूर्य) के समान तथा गिरि के समान धीर (धैर्यवान) 'वीर' को मैं नमस्कार करता हूँ !)

अनन्तविज्ञानमतीत- दोषमबाध्य-सिद्धान्तममर्त्य-पूज्यम्।
श्री वर्द्धमानं जिनमाप्तमुख्यं स्वयम्भुवं स्तोतुमहं यतिष्ये।। १५।।

- हेमचन्द्र सूरि

(**भावार्थ-** अनन्त ज्ञान के धनी, समस्त दोषों से रहित, अकाट्य सिद्धान्त के प्रतिपादक, देवों द्वारा पूजित, आप्त पुरुषों में प्रमुख, स्वयंभू ऐसे वर्द्धमान जिनेन्द्र की स्तुति करने का मैं प्रयत्न करता हूँ।)

कुंडलपुरि सिद्धार्थ भूपालम्। तत्पत्नी प्रियकारिणी बालम्।।
तत्कुलनलिन विकाशितहंसम्। घातपुरोघातिक विंध्वंसम्।।
ज्ञानदिवाकर- लोकालोकम्। निर्जित कर्माराति विशोकम्।।
बालवयस्संयम सुपालितम्। मोहमहानल मथन विनीतम्।। १६।।

- आशाधर

(**भावार्थ-** वह कुंडलपुर के राजा सिद्धार्थ और उनकी पत्नी प्रियकारिणी के बालक (पुत्र) हैं। उनके कुल रूपी कमल को विकसित करने वाले सूर्य के समान हैं। समस्त घात-प्रतिघात के विध्वंसक हैं। अपने ज्ञान सूर्य से लोक और अलोक को प्रकाशित करने वाले हैं। कर्म शत्रुओं को पराजित कर वह विशोक (शोक से विहीन) हुए हैं। बालवय से ही संयम का सम्यक् पालन कर और मोह रूपी महा अग्नि का शमन कर वह विनीत हुए हैं।)

वीर! त्वमानन्दभुवामवीरः मीरो गुणानां जगताममीरः।
एकोऽपि सम्पातितमामनेक-लोकाननेकान्तमतेन नेक ।। १७।।

- ज्ञानसागर ('वीरोदय' महाकाव्य)

(**भावार्थ-** हे वीर प्रभु! तुम आनन्द की भूमि होकर भी अवीर हो ('अ' अर्थात् विष्णु के समान वीर हो अथवा यह है कि होली आदि आनन्द के अवसरों पर आनन्द बढ़ाने वाले अबीर गुलाल हो)। तुम गुणों के मीर (समुद्र) होकर के भी जगत् के अमीर (सबसे बड़े धनाढ्य) हो। हे नेक-भद्र! तुम एक (अकेले) होकर भी अनेकान्त मत से अनेक लोगों को (परस्पर विरोधियों को) एकता के सूत्र में बांधने वाले हो।)

सिद्धारथ सुत सिद्धि-वृद्धि वांछित वर दायकं,
प्रियकारिणी वर पुत्र सप्तहस्तोन्नत कायकं।
द्वासप्तति वर वर्ष आयु सिंहांक सुमंडित,
चामीकर वर वर्ण शरण गौतमयति पंडित।
गर्भ दोष दूषण रहित शुद्ध गर्भ कल्याण करण,
'शुभचन्द्र सूरि' सेवित सदा पुहवि पाप पंकह हरण।। १८।।

– शुभचन्द्र भट्टारक

दिढ़ कर्माचल दलन पवि, भवि सरोज रवि राय।
कंचन छवि कर जोर कवि, नमत वीर जिन पाय।। १९।।

– कवि भूधरदास

मन्दाकिनी दया की जिसने यहाँ बहाई।
हिंसा कठोरता की कीचड़ भी धो भगाई।।
समता सुमित्रता का ऐसा अमृत पिलाया।
द्वेषादि रोग भागे, मद का पता न पाया।।
उस ही महान प्रभु के तुम हो सभी उपासक।
उस वीर वीर-जिनके सद्धर्म के सुधारक।।
अतएव तुम भी वैसे बनने का ध्यान रक्खो।
आदर्श भी उसी का आँखों के आगे रक्खो।। २०।।

– नाथूराम प्रेमी

जबहीं हो सकती है दुनिया की तरक्की 'मुज्तर'
देश हर एक बढ़े आगे लिये सत्य का भेष।
प्राप्त होता है अहिंसा से ही सच्चा आनन्द,
सारे संसार को है वीर का यही उपदेश।। २१।।

– रामकृष्ण 'मुज्तर' काकोरवी

जो निन्दक के प्रतिकूल नहीं, जो पूजक के अनुकूल नहीं।
जो ठुकराते हैं शूल नहीं, जो अपनाते हैं फूल नहीं।।
पर जिनके वन्दन भवाताप हितदाह निकन्दन चन्दन हैं।
इस आनन्दित कवि-वाणी से, वन्दित वे त्रिशलानन्दन हैं।।२२।।

– धन्यकुमार 'सुधेश'

समस्त-संसार-समुद्र-सेतु को, सुरेन्द्र-संपूजित-धर्म-केतु को।
अनन्त आभामय वीर विक्रमी, महा महावीर! प्रणाम आप को।।
सदैव इन्द्रादिक पूजते जिन्हें, सराहते हैं मुनि-सूरि-सिद्ध भी।
अनन्त भू में जिनकी गुणावली, विहार में मग्न अभीत सिंह सी।।
न लोभ के वश्य न काम-क्रोध के, न मोह के दास न द्रोहदंभ के।
विमोहते जो मद-मान विश्व का, नमामि ऐसे नर नाथ! आपको।।
महा महावीर नमामि आप को, सुधीर गंभीर नमामि आप को।
नमामि कर्मक्षय हेतु आप को, सदाश्रयी, श्रीवर हे, नमामहे।।
प्रणामि श्रीसागर ज्ञानसिन्धु को, प्रणाम भू-भूषण विश्व-बंधु को।
नमामि सत्यार्थ-प्रकाश-भानु को, नमामि तत्त्वार्थ-विकास-भानु को ।। २३।।

- अनूप शर्मा

हे वीर तुम्हारे चरणों में भावों के फूल खिले !
तुमने हर प्राणी को दी,
जीवन की कोमल अभिलाषा।
ममता के स्वर में समझादी,
मानव जीवन की परिभाषा।।
तुम गीत बने संगीत बने,
हर मन के मीत बने।।
प्राणों में ज्योति जले,
जन-जन के हृदय मिले।।
हे वीर तुम्हारे चरणों में भावों के फूल खिले ।। २४।।

- ताराचन्द 'प्रेमी'

सब मिलके आज जय कहो श्री वीर प्रभु की।
मस्तक झुका के जय कहो श्री वीर प्रभु की ।। १।।
विघ्नों का नाश होता है, लेने से नाम के।
माला सदा जपते रहो श्री वीर प्रभु की।। २।।
ज्ञानी बनो, दानी बनो, बलवान भी बनो।
अकलंक सम बन जय कहो श्री वीर प्रभु की।। ३।।
होकर स्वतन्त्र, धर्म की रक्षा करो सदा।
निर्भय बनो अरु जय कहो श्री वीर प्रभु की ।। ४।।
तुमको अगर मोक्ष की इच्छा हुई है "दास"।
उस वाणी पर श्रद्धा करो श्री वीर प्रभु की ।। ५।। ।। २५ ।।

- न्यामत सिंह 'दास'

वन्दना के इन स्वरों में
एक स्वर मेरा भी मिला लो।
वन्दनीय प्रभु के पाद-पद्मों में
शीश तुम मेरा भी नवा लो।।
वन्दना कर रहा जन-जन
आज जिन वर्द्धमान महावीर की।
सुझायी थी राह सबको
उन्होंने जो थी बेपीर की।।
अनेकान्त, अपरिग्रह, अहिंसा का
पाठ जो उन्होंने था पढ़ाया।
उस पर चल मानव को
मानव रहना उन्होंने था सिखाया।।
मना रहे अब जयन्ती हम
छब्बीससौवीं उन सन्मति वीर की।
स्वीकारें वे प्रभु यह वन्दनवार,
जो सजायी हुई है 'रमाकान्त' की ।। २६ ।।

❑❑❑

घुमक्कड़राज महावीर

– महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

भारत के प्राचीन धर्मों में जैनधर्म भी है। जैनधर्म के प्रतिष्ठापक श्रमण महावीर कौन थे ? वह भी घुमक्कड़राज थे। घुमक्कड़ धर्म के आचरण में छोटी से बड़ी तक सभी बाधाओं और उपाधियों को उन्होंने त्याग दिया था- घर, द्वार, नारी, संतान ही नहीं, वस्त्र का भी वर्जन कर दिया था। 'करतल भिक्षा तरुतलवास' तथा दिग्-अम्बर को उन्होंने इसलिये अपनाया था कि निर्द्वन्द विचरण में कोई बाधा न हो। श्वेताम्बर बन्धु दिगम्बर कहने के लिये नाराज़ न हों। वस्तुतः हमारे वैशालिक महान घुमक्कड़ कुछ बातों में दिगम्बरों की कल्पना के अनुसार थे और कुछ बातों में श्वेताम्बरों के उल्लेख के अनुसार थे। लेकिन इस बात में तो दोनों सम्प्रदाय और बाहर के मर्मज्ञ भी सहमत हैं कि भगवान महावीर दूसरी तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणी के घुमक्कड़ थे। वह आजीवन घूमते ही रहे। वैशाली में जन्म लेकर विचरण करते-करते ही पावा में उन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीर से बढ़कर यदि कोई त्याग, तपस्या और सहृदयता का दावा करता है तो उसे मैं केवल दम्भी कहूँगा।

(उपर्युक्त अवतरण महाघुमक्कड़ राहुल सांकृत्यायन की रोचक पुस्तक 'घुमक्कड़ शास्त्र' से साभार उद्धृत-सं.)

LIFE OF LORD MAHAVIRA

— Dr. Jyoti Prasad Jain

Birth- He was born in B.C. 599, on the 13th day of the bright fortnight of the month of Chaitra, 178 years after the nirvana of the penultimate Tirthankara, Parshva, and belonged to the martial race of the Kshatriyas. His father Siddhartha, son of Sarvartha, was the head of the Jnatrika clan, an important confederate of the powerful Vajjian confederacy of republican states. The great city of Vaishali (modern Basarh in the Muzaffarpur district of Bihar) was the headquarters of the confederacy, all the heads or elders of which were given the title of 'raja'. Chetaka, the leader of the Lichchhavi clan, was the supreme head of the confederacy and his son, Simha-bhadra, was the commander-in-chief of its armed forces, Chetaka's daughter, Trishala, also called Priyakarini, Vishala and Videhadatta, was married to Siddhartha, the Jnatrika raja of Kundagrama (Kollaga, Vasukunda or Kshatriya-Kunda, near Basarh) where she gave birth to Mahavira. Through her, he was related to emperors Bimbisara-Shrenika and Ajatashatru-Kunika of Magadha and kings Dadhivahana, Shatanika, Pradyota, Dasharatha and Udayana, respectively of Anga, Vatsa, Avanti, Dasharna and Sindhu-Sauvira, who were married to her several sisters. King Jitashatru of Kalinga was related to Mahavira through his father. Thus he was well-connected and, although the son of a petty republican chief, belonged, according to the standards of even that age, to a highly respected family. He had all the worldly goods at his disposal and suffered from no want or disability. He was born in a free and freedom-loving environment, and his parents were well-educated, cultured, brave, gentle and pious. They followed the creed of the preceding Tirthankara, Parshva, and worshipped in shrines dedicated to the holy Arhatas.

Even before Mahavira's birth, certain auspicious dreams seen by the mother and other signs had signified that a great immortal was going to be born. No wonder, when the moment arrived, it was celebrated with eclat and universal rejoicing. The needy were liberally provided and prisoners granted general amnesty. The fortunes of the family and the prosperity of the land and the people were on the increase in an unprecedented manner, hence the child was given the name Vardhamana. He was extremely good-looking, perfectly healthy, and the beloved of all. He possessed the one thousand and eight marks

and signs of a truly great personage. Every body was happy. Indeed, it was a great birth that takes place once in a while, also because greater still was the life that the child was to lead in future, and the greatest the truth that He was to reveal for the good of the entire humanity.

Childhood and Youth- From His early childhood Mahavira evinced signs of profound intelligence, wonderful mental and physical power, undaunted bravery and fearlessnes, superb strength of character, a highly contemplative and religious bent of mind and extremely gentle and compassionate nature. He had inherited from His parents all that was good and praiseworthy in them, in addition to the spiritual heritage He had acquired as a result of self-discipline and piety practised by His self in a number of previous births. He was thus endowed with a soul well advanced on the path of spiritual evolution. He was no ordinary child; the sapling destined to bloom into a big and beautiful tree has smooth leaves. The worthy parents, no less solicitous than loving, brought up this apple of their eye with the utmost care.

The boy Mahavira took active part in games and sports and was the acknowledged leader of all the young boys of the neighbourhood. On several occasions His physical strength, daring, fearlessness and presence of mind were put to severe tests, and every time he came out with flying colours. Whether it was a wild elephant run amok, a terrible serpent in the garden, some celestials in disguise, or any other ordeal, it had little effect on the Great Hero.

In matters of education, too, there was nothing which He did not already know. No teacher, however learned, could teach Him anything new. Yet, the formalities of educating Him were undergone. The process had started while He was yet in the womb of the mother, by placing her under the care of the best attendants and companions available, who provided her healthy amusements,aesthetic pleasures, invigorating recreations,and intellectual exercises meant to widen her knowledge and sharpen her intellect. These attentions paid to the mother had naturally their desired effect on the child she was carrying. And, after birth, when He attained school-going age, He was sent to the best teachers that could be found in the land.

The blessed child thus gradually grew up into a very fine, handsome and cultured youngman who commanded the love and esteem of everybody He came in contact with. Offers of marriage also began to pour in. He, however, politely but firmly declined to enter into matrimony because it did not fit in with the life He had chosen for

Himself. He was destined for much higher things, and could not afford to indulge in the pleasures of the flesh, in worldly comforts, ease and luxury, nor to confine His interests within the narrow limits of the home and the family.

In fact, Mahavira was very much alive to the patent misery, pain and suffering noticed whitherever He cared to look. The bloody sacrifices and the cruel and reckless slaughter of animals, not only for food and pleasure but also in the holy name of religion and for the purpose of propitiating diverse gods and goddesses, the pretensions, caste exclusiveness and arrogant high-handedness of the Brahmanas, the bad plight and exclusion from the benefits of active religion of the bulk of the masses comprising the so-called lower castes and outcastes, the inferior status and disabilities imposed on women, the institution of slavery, the feudal system, economic disparities and exploitation of the weak by the strong, inequity and injustice prevailing all round, various other social, economic and political ills, superstitions, scepticism and a general degeneration of moral values were very much in evidence. The numerous religious teachers and sectarians, who often preached conflicting tenets, made confusion worse confounded. The conditions were sorely in need of a true saviour.

Renunciation and Penance- Mahavira, therefore, when not even of thirty years in age, renounced the world in B.C.570. He liberally distributed all he possessed among the needy; nobody went dissatisfied from his doors. Then he repaired to the nearby Jnatra-khand forest, took off all the clothes and ornaments from his body, becoming perfectly nude, plucked the hair of the head with own hands and took the vow of asceticism. This Great Renunciation marked the beginning of a career of penance and severe austerities, self-discipline and self-purification. He kept long fasts lasting for days, weeks and sometimes months together, spoke little and roamed about from place to place, staying to rest for a while in some deserted place. With superb fortitude and equanimity, without ill-will towards anybody, he bore the inclemency of the weather, the onslaught of insects and beasts, and insults, slights, tortures and diverse afflictions at the hands of perverse men and even gods and demons. Most of the time of this great Yogin was spent in self-introspection, deep contemplation and concentrated spiritual meditation. At last,through this twelve-year long spiritual discipline of the highest order, the Great Hero succeeded in His quest for the Truth, attained Kaivalya, and became the greatest spiritual Victor, the Jina, and the all knowing, all-seeing Arhata.

Enlightenment and Promulgation of Wheel of Law- Thus, in B.C. 557, Mahavira obtained Enlightenment while one afternoon he was sitting under a sal tree in a park on the bank of the river Rijukula, outside the village of Jrambhika (in eastern Bihar). From there he went to Rajagriha, the capital of Magadha, enlisted as his principal disciples (Ganadharas) a team of highly learned eleven pundits, headed by Indrabhuti Gautama, delivered his first sermon from the top of Mount Vipula outside Rajagriha, on the first of the month of Shravana (August I,B.C. 557), and thus promulgated his Dharma-Chakra (the Wheel of Law) for the benefit of all the living beings. For the next thirty years, The Tirthankara went from place to place, giving his message of peace and goodwill in the language of the masses, the Ardha-Magadhi. His audience was called Samavasarana, because it was open to all without distinction of race, colour, caste, class, sex or age, and everyone of them had equal opportunity of listening to and being benefited by the teachings of the Master who, indeed, was one of the most powerful speakers that ever stood before an audience. He spoke with all the forcefulness of truth which carried ready conviction to the hearts of his hearers. It is said that He spoke the language everybody could understand. No wonder, because it was the language of love-love for all.

Nirvana- At last, this all-time great and noble career came to an end with the passing of the Lord into Nirvana, in the last watch of the night of the 14th day of dark half of Kartika (Tuesday, 15th October, B.C. 527), on the bank of the Lotus-pond, outside the city of Pawa (near Patna in Bihar). The celebration was attended by profuse illumination and marked the commencement of the very popular Indian festival of Deepawali (the Feast of the Lamps). Light is the symbol of knowledge,and signifies that although the corporeal body of the Master was no more, 'the light of knowledge'he disseminated still continues to enlighten mankind.

❑❑❑

जिनवाणी

● तस्सेस मग्गो गुरु विद्ध सेवा - उत्त ३२/३

(अनन्त सुख रुप मोक्ष को प्राप्त करने का पहला मार्ग गुरु जनों और वृद्ध जनों की सेवा है।)

सम्पादकीय

२६००वां वीर जयन्ति महोत्सव वर्ष

'जीओ और जीने दो' का महान् उद्घोष करने वाले, अहिंसा को ही धर्म का मूल आधार बताने वाले, जन धर्म–विश्व धर्म के महान् प्रणेता, अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी को इस पृथ्वी पर जन्मे चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को इस वर्ष २६०० वर्ष पूरे हो गए। १२ वर्ष की कठोर संयम साधना से पूर्ण ज्ञान–केवल ज्ञान प्राप्त कर वे आत्मा से परमात्मा बने थे। अहिंसा, जीव दया, अपरिग्रह, अनेकान्तवाद पर आधारित उनकी शिक्षाएं सार्वकालिक हैं, हर युग में प्रासंगिक हैं। न केवल जैन धर्मावलम्बी वरन् देश-विदेश के सभी अहिंसा प्रेमी जन इस वर्ष की जयन्ति दिनांक ६ अप्रैल से प्रारम्भ होने वाले पूरे वर्ष को भगवान महावीर का २६०० वां जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष के रूप में बड़े उल्लास के साथ मना रहे हैं।

भारत सरकार ने भी इस वर्ष को **अहिंसा वर्ष** घोषित करते हुए पूरे वर्ष में सम्पन्न किए जाने वाले विभिन्न आयोजनों की रूप रेखा बनाने तथा उनके क्रियान्वयन को अपेक्षित भव्यता के साथ सुनिश्चित करने के लिए प्रधानमंत्री जी की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय समिति का गठन किया है तथा राज्य सरकारों ने भी भारत सरकार के निर्देश पर प्रादेशिक स्तर की समितियां गठित कर दी हैं।

राष्ट्रीय समिति की प्रथम बैठक की अध्यक्षता करते हुए प्रधानमंत्री माननीय श्री अटल बिहारी वाजपेई जी ने अपने उद्बोधन में कहा कि भगवान महावीर की शिक्षाओं की प्रासंगिकता २६०० वर्ष पुरानी होते हुए भी बढ़ती ही जा रही है। संयम, अपरिग्रह और विविधिता से युक्त अनेकान्तवाद चिन्तन का एक ऐसा क्षितिज है जिसकी उपयोगिता विश्व में निरन्तर बढ़ रही है। एकता के साथ-साथ जो विविधता है और उसमें जो सत्य है उसको दुनिया अधिकाधिक मान रही है। इस दृष्टि से भगवान के इस संदेश को देश और विश्व में कैसे पहुंचाया जा सकता है इस पर कार्य करने की जरूरत है। उन्होंने कहा कि महोत्सव को स्थायी महत्व की चीजों से जोड़ा जाना चाहिए। महोत्सव वर्ष के विभिन्न आयोजनों के लिए प्रधानमंत्री जी ने १०० करोड़ रुपये प्रदान करने की भी घोषणा की।

राष्ट्रीय समिति द्वारा लिए गए कतिपय महत्वपूर्ण निर्णय निम्न प्रकार हैं जिनका क्रियान्वयन संबंधित मंत्रालयों, प्रादेशिक सरकारों तथा जैन समाज के सहयोग से सुनिश्चित किया जा रहा है। उन पर हम अपनी टिप्पणी व सुझाव भी दे रहे हैं।

१– अहिंसा वर्ष का प्रथम दिवस (दि. ६ अप्रैल २००१) मांस-मदिरा रहित दिवस घोषित किया गया है तथा सभी कसाई खाने बन्द रखे जाने और सार्वजनिक स्थानों पर

मांसाहारी भोजन न परोसे जाने के निर्देश दिए गए हैं। इस वर्ष को Global year of Non-violence (विश्व अहिंसा वर्ष) घोषित कराने की दृष्टि से संयुक्त राष्ट्रसंघ से अनुरोध किया गया है।

{**अहिंसा वर्ष-** इस प्रसंग में हमारी मांग है कि ६ अप्रैल के अलावा इस अहिंसा वर्ष में पड़ने वाले जैन धर्म के कतिपय अन्य महत्वपूर्ण पर्व (यथा- अक्षय तृतीया-२६ अप्रैल, श्रुत पंचमी-२७ मई, वीर शासन जयन्ति-६ जुलाई, रक्षा बन्धन-४ अगस्त, संवत्सरी-२३ अगस्त, अनन्त चतुर्दशी-१ सितम्बर, क्षमावणी-३ सितम्बर, दीपावली-१४ नवम्बर, ऋषभ निर्वाण- माघ कृष्णा चतुर्दशी, ऋषभ जयन्ति- चैत्र कृष्ण नवमी, महावीर जयन्ति- चैत्र शुक्ला त्रयोदशी सन् २००२) भी मांस-मदिरा रहित दिवस घोषित किए जाएं।

फांसी पर रोक - केन्द्र व प्रादेशिक सरकारों से अनुरोध है कि इस अहिंसा वर्ष में किसी भी बन्दी को फांसी न दी जाए।

मांस निर्यात पर रोक- जैन समाज सहित देश को बहुसंख्यक अहिंसा एवं जीवदया प्रेमी जनता की राय में चन्द करोड़ डालर अर्जित करने के लोभ में देश की पशु सम्पदा का बड़ी संख्या में वध कराकर मांस निर्यात करना घोर अनैतिक कार्य है जो पर्यावरण को असन्तुलित करने वाला भी है, तथा वह पिछले कई वर्षों से मांस निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाए जाने की मांग करती आ रही है। अहिंसा वर्ष की सार्थकता तो इसी में है कि देश से मांस निर्यात बिल्कुल बन्द कर दिया जाय। किन्तु यदि ऐसा करना तुरन्त संभव न हो तो भी हमारी मांग है कि मांस निर्यात की एक निश्चित अवधि में पूर्ण बन्दी की योजना बनाई जाये तथा समयबद्ध कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रति वर्ष मांस निर्यात में कमी की जाय। इस बीच अवैध रुप से चल रही पशुवध शालाओं को सील कर देने का भी जोरदार अभियान चलाया जाय। भारत सरकार यह भी संकल्प करे कि देश में अब और कोई नवीन पशुवध शाला स्थापित नहीं करने दी जाएगी न ही वर्तमान वधशालाओं की उत्पादन क्षमता में कोई वृद्धि की ज़ाएगी- सम्पादक}

(२) २६०० गावों में शिक्षा, स्वास्थ्य, पेय जल, सड़कों के निर्माण आदि की समुचित सुविधाओं का विकास कर उन्हें देश के नक्शे पर आदर्श गांवों की श्रेणी में लाया जाएगा।

{हमारा सुझाव है कि इस प्रकार विकसित किए गए आदर्श गांवों में एक शिलापट्ट भी लगाया जाय जिसमें यह उल्लेख रहे कि इस गांव का विकास भगवान महावीर के २६०० वें जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष में कराया गया है तथा शिलापट्ट पर अहिंसा, अपरिग्रह, संयम, अनेकान्तवाद, एकता आदि से संबंधित भगवान महावीर की शिक्षाएं भी संक्षेप में अंकित हों। इन आदर्श गांवों को स्वावलम्बी बनाने के लिए इनमें खादी-ग्रामोद्योग विभाग की योजनाओं को भी सघन रूप से चलाया जाना चाहिए- सम्पादक}

(३) भगवान महावीर की जन्म स्थली वैशाली में प्रकृति अध्ययन केन्द्र की स्थापना की जाएगी। दिल्ली के रिंग क्षेत्र में बने महावीर वन स्थली पार्क को पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्द्धन की दृष्टि से विकसित किया जाएगा।

(४) भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के अवसर पर शुरु की गई परियोजनाओं को पूरा किया जाएगा। जन्म स्थली वैशाली और महानिर्वाण स्थल पावापुरी में जो परियोजनाएं अधूरी रह गई हैं उन्हें भी पूरा किया जाएगा।

{उत्तर प्रदेश राज्य समिति द्वारा संस्तुत भी कुछ ऐसी परियोजनाएं हैं जिनका या तो कार्यान्वयन कुछ अपरिहार्य कारणों से प्रारम्भ नहीं किया जा सका था या जिन्हें शुरू तो कर दिया गया था पर संवर्द्धन सुद्रढ़ीकरण किया जाना शेष है। एक है उत्तर भारत के सुविख्यात अभयारण्य **जिम कार्बेट नेशनल पार्क में एक भव्य अहिंसा स्तम्भ का निर्माण** जिस पर भगवान महावीर की जीव दया- अहिंसा की शिक्षाएं अंकित हों। इसका निर्माण अब इस जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष में उत्तरांचल प्रदेश सरकार द्वारा करा दिया जाना चाहिए।

दूसरी परियोजना है- **प्रदेश की राजधानी लखनऊ में जैन धर्म साहित्य के एक शोध पुस्तकालय की स्थापना-** राज्य समिति के कुछ उत्साही सदस्यों ने समिति के सचिव (तत्कालीन आयुक्त एवं सचिव शिक्षा विभाग उ.प्र. सरकार) की प्रेरणा एवं सहयोग से शोध पुस्तकालय का बीजांकुर कर दिया था तथा उसके संचालन के लिए जैन समाज के कतिपय प्रबुद्ध जनों को साथ लेकर एक रजिस्टर्ड सोसाइटी (तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.) का गठन भी कर दिया था। तब से यह पुस्तकालय निरन्तर प्रगति करता आ रहा है तथा दर्जनों शोध छात्र इससे लाभान्वित हो चुके हैं और सम्प्रति हो रहे हैं। तथापि इसके निजी भवन के निर्माण के लिए उपयुक्त भूखंड की उपलब्धि एवं इसके संवर्द्धन, सुदृढ़िकरण एवं स्तरीय रखरखाव के लिये राज्य सरकार का सहयोग अपेक्षित है।

अन्य राज्यों में भी ऐसी कई परियोजनाएं हो सकती हैं। वे भी इस जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष में पूरी की जानी चाहिए- सम्पादक}

(५) जैन धर्म की पांडुलिपियों को समुचित ढंग से संग्रहीत एवं संरक्षित करने का कार्य शुरु किया जाएगा। प्राचीन महत्व की पांडुलिपियों और जैन कला कृतियों की भव्य प्रदर्शनियां दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई और बैंगलूर में लगाई जाएंगी। जैन स्मारकों के संरक्षण एवं उनके आस-पास के वातावरण को सुन्दर बनाने की योजनाओं को मूर्त रूप दिया जाएगा तथा बौद्ध धर्म स्थलों एवं स्मारकों को लेकर बनाई गई पर्यटन गाइड पुस्तिका की तरह जैन धर्म स्थलों एवं स्मारकों के विवरण के साथ सचित्र गाइड पुस्तिका भी प्रकाशित की जाएगी।

{समाज की कुछ संस्थाएं (जैसे कुन्द-कुन्द भारती, दिल्ली, अनेकान्त ज्ञान मन्दिर,

बीना आदि) पहिले से ही पांडुलिपियों के संग्रह संरक्षण के कार्य में प्रयत्नशील हैं। उन्हें इस वर्ष में सुदृढ़ किया जाना अपेक्षित है। जैन धर्म के अनेकों प्राचीन महत्वपूर्ण ग्रंथों की पांडुलिपियां केवल विदेशों के संग्रहालयों में ही उपलब्ध हैं। भारत के दूतावासों के सहयोग से ऐसी पांडुलिपियों की फोटो कापी इस वर्ष में प्राप्त की जानी चाहिए। इसी प्रकार जो महत्वपूर्ण जैन मूर्तियां व कलाकृतियां केवल विदेशों के संग्रहालयों में हों उनके भी प्लास्टर कास्ट प्राप्त किए जाने चाहिए। कलाकृतियों की प्रदर्शनियां अन्य राज्यों में भी उन महानगरों में लगाई जानी चाहिए जिनके लिए वहां की राज्य समितियां संस्तुति करें- सम्पादक}

(६) भगवान महावीर के जीवन दर्शन व उनकी अनेकान्तवाद, अहिंसा, अपरिग्रहवाद आदि शिक्षाओं की बृहद् जानकारी देने के लिए देश भर में २६०० आइ. टी. केन्द्र खोले जाएंगे। भगवान महावीर की स्मृति में डाक टिकट व सिक्के जारी किए जाएंगे।

(७) भगवान महावीर की शिक्षाओं, अनेकान्तवाद और अहिंसा पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन व राष्ट्रीय संगोष्ठियां आयोजित की जाएंगी।

{भगवान महावीर की जन्म स्थली और निर्वाण स्थली के विषय में अभी तक श्वेताम्बर आम्नाय व दिगम्बर आम्नाय में मतैक्य नहीं है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय में मुंगेर जिले में लछवाड स्थित क्षत्रिय कुंड को भगवान की जन्म स्थली की मान्यता प्राप्त है जबकि पुरातत्वविद एवं इतिहासवेत्ता वैशाली के निकट वासा कुंड स्थान को ही सही जन्म स्थल मानते हैं तथा दिगम्बर आम्नाय ने भी इसे स्वीकार कर लिया है। इसी प्रकार जबकि श्वेताम्बर आम्नाय नालन्दा के निकट पावापुरी को भगवान की निर्वाण भूमि मानती आ रही है, कारलाइल आदि पुरातत्वविदों ने यह सिद्ध किया है कि उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले का सठियांबडीह (फाजिलनगर) ही भगवान महावीर का निर्वाण स्थल प्राचीन पावा है। दिगम्बर जैन समाज ने इस खोज के तर्क को स्वीकार कर इसका पावानगर तीर्थक्षेत्र के रूप में विकास करना प्रारंभ कर दिया है तथा वहाँ पर मन्दिर, मानस्तंभ तथा धर्मशाला का निर्माण भी हो गया है। वहां पर एक पावानगर महावीर डिग्री कालिज को भी २५०० वे निर्वाण वर्ष में मान्यता प्राप्त हुई है। हमारा सुझाव है कि प्रस्तावित राष्ट्रीय संगोष्ठयों में से किसी ने जन्म भूमि व निर्वाण भूमि की सही पहिचान के विषय पर पुरातत्वविदों, इतिहासवेत्ताओं तथा शास्त्र मर्मज्ञ विद्वानों के बीच विशद चर्चा के परिणाम स्वरुप सही पहिचान करके उन स्थलों का भव्य रूप में विकास किया जाना चाहिए- सम्पादक}

राष्ट्रीय समिति द्वारा निर्धारित कार्यक्रमों के अतिरिक्त इस वर्ष में प्रत्येक नगर व कस्बे में जहां भी जैन धर्मावलम्बी शताधिक संख्या में बसते हों, एक सार्वजनिक उद्यान को भगवान महावीर के नाम पर विकसित किया जाए और उसमें स्थानीय जैन समाज के सहयोग से एक अहिंसा स्तम्भ का निर्माण कराया जाय जिस पर भगवान महावीर की अहिंसा, जीव दया, सर्वधर्म समभाव व विश्व बंधुत्व आदि शिक्षाएं अंकित की जांए।

राष्ट्रीय समिति के विचारार्थ हमारा यह भी सुझाव है कि देश में रजिस्टर्ड सोसाइटियों द्वारा संचालित सभी सार्वजनिक पुस्तकालयों को जैन धर्म-दर्शन संस्कृति संबंधी साहित्य प्रदान किया जाए या क्रय करने के लिए विशिष्ट अनुदान दिया जाय। बड़े पुस्तकालयों को श्रमण संस्कृति कक्ष स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

अल्पसंख्यक मान्यता- यद्यपि कर्नाटक, मध्य प्रदेश आदि कतिपय प्रदेशों की न्याय प्रिय सरकारों ने मांग का औचित्य स्वीकार कर जैन समाज को अल्पसंख्यक धार्मिक समुदाय की मान्यता प्रदान कर दी है, अन्य राज्य सरकारों ने यह तर्क देकर कि केन्द्र सरकार ने जैन समुदाय को अल्पसंख्यक अधिसूचित नहीं किया है जैन समाज की मांग को अभी तक स्वीकार नहीं किया है। जैन समाज को राष्ट्रीय समिति के माध्यम से केन्द्र सरकार से यह पुरजोर मांग करनी चाहिए कि उसे शीघ्रातशीघ्र अल्प संख्यक धार्मिक समुदाय अधिसूचित किया जाए।

जैन समाज की कतिपय अन्य सामाजिक संस्थाओं ने भी भगवान महावीर जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष के लिए अपने-अपने सुझाव दिए हैं। हम आशा करते हैं कि राष्ट्रीय समिति उपर्युल्लिखित सुझावों सहित इस संबंध में प्राप्त सभी सुझावों पर गंभीरता पूर्वक विचार कर निर्णय लेगी। यह तो हुई राष्ट्रीय समिति द्वारा निर्णीत कार्यक्रमों व केन्द्र तथा राज्य सरकारों से अपेक्षाओं की बात। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि जैन समाज के सभी वर्ग इन कार्यक्रमों को पूर्ण भव्यता के साथ सम्पन्न कराने में अपना भरपूर सहयोग देंगे। पर हमें इतने में ही अपने दायित्व की इति श्री न मान कर स्वयं भी कुछ आत्मालोचन करना चाहिए। यह पूरा वर्ष हमारे लिए एक विशिष्ट धार्मिक पर्व है और इसे हमें पूर्ण धार्मिकता के साथ मनाना चाहिए। हमारे एक पूज्य आचार्य श्री (सुविशाल गच्छाधिपति श्रीमद् विजय महोदय सूरीश्वर जी) ने एक परिपत्र जारी कर राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों का विरोध तक करने का आह्वान जैन समाज से कर दिया क्योंकि जैसा कि भारत सरकार ने २५००वें निर्वाण महोत्सव के राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों के विषय में उस समय स्पष्ट किया था, "**इन कार्यक्रमों के साथ कोई धार्मिक प्रवृत्ति या धार्मिक विधि संलग्न नहीं होगी**"। हम आचार्य श्री के विरोध के आह्वान से तो कतई सहमत नहीं हैं क्योंकि भगवान महावीर किसी सम्प्रदाय विशेष की बपौती नहीं हैं और हर किसी को अपने ढंग से उनका जन्म दिन मनाने व उन्हें अपनी विनयांजलि अर्पित करने तथा उनकी शिक्षाओं से लाभान्वित होने का समान अधिकार है। हाँ जैन समाज को अवश्य ही इस पूरे वर्ष चल रहे धार्मिक पर्व में अपने को अधिकाधिक धार्मिकता से भी जोड़ कर विशेष पुण्य अर्जित करना चाहिए। धार्मिकता से मेरा तात्पर्य केवल विशाल शोभा यात्राओं तथा पूजा विधानों के आयोजनों के वैभव युक्त प्रदर्शन में ही उलझ कर रह जाना नहीं है। यह तो धार्मिकता का बाह्य आवरण मात्र है। **इस धार्मिक पर्व में हमें अपने समाज को विशेषकर समाज के युवा वर्ग को व्यसन मुक्त करने, मांस तथा तम्बाकू पान मसाला व अन्य नशीले पदार्थों के सेवन से तथा चमड़े के जूते**

चप्पल आदि सभी चर्म उत्पादों के उपभोग से पूर्ण विरत करने का एक सशक्त अभियान चलाना होगा। विवाह कार्य सादगी से तथा दिन में ही सम्पन्न कराने के, अभिभावकों व युवकों से दहेज न लेकर विवाह सम्पन्न करने के तथा व्यापारी बन्धुओं से मिलावट न करने व कालाबाजारी न करने के प्रतिज्ञा पत्र भरवाने होंगे। श्रावकाचार ही नहीं वरन् श्रमणाचार के भी निरन्तर गिरते स्तर पर प्रभावी रोक लगा कर उन्हें उन्नत करने का एक सशक्त अभियान चलाना होगा। अन्तिम तीर्थंकर महाप्रभु भगवान महावीर के इस पावन जन्म कल्याण महोत्सव को मनाने का यही हमारा धार्मिक अनुष्ठान होना चाहिए। इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने में हम जितनी सफलता अर्जित कर पाएंगे, इस पावन महोत्सव पर्व को हम उतनी ही धार्मिकता से जोड़ पायेंगे।

अकेले दिगम्बर जैन आम्नाय में आचार्यों, मुनियों, आर्यिकाओं, ऐलक, छुल्लक व ग्रह त्यागी ब्रह्मचारियों की संख्या ३००० के लगभग है तथा पूरे जैन समाज में तो इन त्यागीव्रती महाव्रतियों की संख्या १२००० से भी अधिक है और ये सभी दैनिक नैत्यिक क्रियाओं से बचा प्रायः सारा शेष समय पद यात्रा करने समाज को धर्म के प्रति जाग्रत करने के लिए धर्म प्रवचन, धर्म चर्चा, स्वाध्याय करने-कराने तथा पूजा विधान कराने में व्यतीत करते हैं। यदि हमारे सभी ये पूजनीय संत जिनका समाज पर अकंथनीय प्रभाव है, समाज के नैतिक-धार्मिक उत्थान के उपर्युल्लिखित अभियान से अपने को जोड़ लें और इसमें पूरे लगन से जुट जाएं तो इस धार्मिक अनुष्ठान के सफल होने में देर नहीं लगेगी और हम महावीर के सही अर्थों में अनुयायी कहलाने के अधिकारी हो सकेंगे। किन्तु यह तो दिवा स्वप्न है। जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष के पावन पर्व में हम जैन समाज का ध्यान एक अन्य ज्वलन्त समस्या की ओर भी आकर्षित करना चाहते हैं। भगवान महावीर का अनेकान्तवाद दर्शन मानव समाज को उनकी एक ऐसी अतुलनीय देन है जिसको अपना कर सामाजिक-धार्मिक, राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय अधिकांश समस्याएं सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझाई जा सकती हैं। हम समस्त विश्व को तो इसे अपनाने की प्रेरणा देते हैं पर अपने स्वयं के मन भेद इसके प्रकाश में ढूंढ़ने का प्रयास क्यों नहीं करते? हमारे कई तीर्थक्षेत्रों पर, जो हम सभी जैन धर्मावलम्बियों के लिए समान रूप से पूजनीय स्थल हैं, स्वामित्व पूजा-उपासना आदि के अधिकारों संबंधी छोटे मोटे विवादों को लेकर दीर्घ काल से दिगम्बर-श्वेताम्बर बन्धुओं के बीच न्यायालयों में विवाद चल रहे हैं जिनमें उभय समाज के विपुल द्रव्य का अपव्यय हो रहा है। हमारे विचार में उभय पक्षों के शीर्ष नेताओं तथा धर्म गुरुओं द्वारा थोड़ी सी उदार दृष्टि अपनाकर आपसी बातचीत (या पंच निर्णय) से न्यायालय के बाहर ही विवाद सुलझाएं जा सकते हैं। यदि हम ऐसा कर लें तो यह भगवान महावीर के २६०० वें जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष में हमारी अविस्मरणीय उपलब्धि होगी।

– अजित प्रसाद जैन

❑❑❑

तीर्थंकर महावीर

- आचार्य श्री विद्यानन्द मुनि

जब ग्रीष्म का सूर्य अपनी प्रखर किरणों से जगत को संतप्त कर डालता है, पक्षियों का उन्मुक्त गगन विहार बन्द हो जाता है, स्वच्छन्द विहारी हिरणों की खुले मैदान की आमोदमयी क्रीड़ा रुक जाती है, असंख्य प्राणधारियों की तृषा बुझाने वाले सरोवर सूख जाते हैं, उनकी सरस मिट्टी भी नीरस हो जाती है, जनता का आवागमन अवरुद्ध हो जाता है, प्राणदायक वायु भी तप्त लू बनकर प्राणहारक बन जाती है, समस्त थलचर, नभचर प्राणी असह्य ताप से त्राहि-त्राहि करने लगते हैं।

तब जगत की उस व्याकुलता को देखकर प्रकृति करवट लेती है, आकाश में सजल काले बादल छा जाते हैं, संसार का संताप मिटाने के लिए उनमें से शीतल जल-बिन्दु टपकने लगते हैं, वाष्प (भाप) के रूप में पृथ्वी से लिए हुए जल-ऋण को आकाश सूद-समेत चुकाने के लिए जलधारा की झड़ी बाँध देता है जिससे पृथ्वी न केवल अपनी प्यास बुझाती है, अपितु असंख्य व्यक्तियों की प्यास बुझाने के लिए अपना भंडार भी भर लेती है, जनता के आमोद-प्रमोद के लिए हरी घास की चादर बिछा देती है, समस्त जगत का संताप दूर हो जाता है और सभी मनुष्य, पशु-पक्षी आनन्द की ध्वनि करने लगते हैं।

इसी तरह स्वार्थ की आड़ में जब दुराचार-अत्याचार संसार में फैल जाता है; दीन, हीन, निःशक्त प्राणी निर्दयता की चक्की में पिसने लगते हैं, रक्षक जन ही उनके भक्षक बन जाते हैं, स्वार्थी दयाहीन मानव धर्म की धारा अधर्म की ओर मोड़ देता है, दीन असहाय प्राणियों की करुण पुकार जब कोई नहीं सुनता, तब प्रकृति का करुण स्रोत बहने लगता है। वह ऐसा पराक्रमी साहसी वीर ला खड़ा करती है, जो अत्याचारियों के अत्याचार को मिटा देता है, दीन-दुःखी प्राणियों का संकट दूर करता है और जनता को सत्पथ दिखाता है।

आज से २६०० वर्ष पहले भारत की वसुन्धरा भी पाप-भार से कांप उठी थी। जनता जिन लोगों को अपना धर्म-गुरु पुरोहित मानती थी, धर्म का अवतार समझती थी, उन ही का मुख रक्त-मांस का लोलुप बन गया था, अतः वे अपनी लोलुपता शान्त करने के लिए स्वर्ग, राज्य, पुत्र, धन आदि का प्रलोभन देकर भोली-अबोध जनता से हवन कराते थे- उनमें बकरों आदि अनेक मूक, निरीह और निरपराध पशुओं, यहाँ तक कि कभी-कभी धर्म के नाम पर कत्ल करके उनके मांस का हवन करते थे। ज्ञानहीन जनता उन स्वार्थी, माने हुए धर्म गुरुओं के वचनों को परमात्मा की वाणी समझकर दयाहीन पाप को धर्म समझ बैठी थी; इस तरह दीन, निर्बल, असहाय पशुओं की करुणाजनक आवाज सुनने वाला कोई न था।

इस प्रकार मांस-लोलुप धर्मान्धों का स्वार्थ और जनता का अज्ञान उस पाप-कृत्य का संचालन कर रहा था। उस समय आवश्यकता थी जन साधारण को ज्ञान का प्रकाश देने की-और पथ-भ्रष्ट धर्मान्धों का हृदय बदलने की, जिससे भारत का पाप-भार हल्का होता और पाप की दुर्गन्ध देश से दूर होती।

और जब तीर्थंकर महावीर का मर्मस्पर्शी उपदेश जनता ने सुना तो धर्म का सुन्दर सत्य स्वरूप उसे ज्ञात हुआ। उस धर्म प्रचार से अहिंसा का प्रभावशाली प्रसार हुआ, पशुयज्ञ होने सर्वत्र बन्द हो गये। हिंसा कृत्य और मांस-भक्षण से भी जनता घृणा करने लगी। हिंसक लोग तीर्थंकर महावीर का उपदेश सुनकर स्वयं अहिंसक बन गये।

श्री महावीर तीर्थंकर ने इच्छारहित होकर भी भव्यजनों के प्रति सहज दया से प्रेरित होकर अथवा उनके प्रबल पुण्ययोग से काशी, कश्मीर, कुरु, मगध, कोशल, कामरूप, कच्छ, कलिंग, कुरुजांगल, किष्किंधा, मल्लदेश, पांचाल, केरल, मद्र, चेदि, दशार्ण, वंग, अंग, आंध्र, उशीनर, मलय, विदर्भ, गौड़ आदि देशों में धर्मप्रभावना की, देशनार्थ प्रवचन किया। एतावता अनेक प्रान्तों तथा देशों में तीर्थंकर महावीर का मंगल विहार हुआ और महान धर्म-प्रचार हुआ। उनकी भाषा दिव्य ध्वनिरूपिणी थी, जिसे सभी उपस्थित श्रोता समझते थे। जहाँ-जहाँ तीर्थंकर भगवान विहार करते थे वहाँ-वहाँ धर्मपीयूषपानार्थियों को उपदेश प्रदान करते थे।

तीर्थंकर महावीर का जहां भी मंगलमय विहार हुआ, वहाँ के शासक, मंत्री, सेनापति, पुरोहित, तथा अन्य साधारणजन उनके अनुयायी भक्त बनते गये। जिस तरह सूर्य के उदय से अंधकार हटता जाता है उसी तरह तीर्थंकर महावीर के उपदेश से अज्ञान, भ्रम, अधर्म, अन्याय, अत्याचार, हिंसा-कृत्य आदि पापाचार साधारण जन क्षेत्र से दूर होता गया और निरपराध मूक पशु जगत को संरक्षण मिला।

❑❑❑

अहिंसा

जगत के जीव सब सम हैं, किसी को कम नहीं लेखो
सभी को प्राण प्यारे हैं, किसी पर गम नहीं फेंको।
श्री महावीर स्वामी की अहिंसा ये बताती है
इन्हें कुछ दे नहीं सकते, तो केवल प्यार से देखो।

– हजारीलाल जैन "काका"

यदि महावीर तीर्थंकर नहीं होते

- आचार्य श्री तुलसी

मैं कई बार सोचता हूँ कि यदि महावीर तीर्थंकर नहीं होते तो उनके अनुयायी उन्हें अतीत से कसकर रखते, आगे नहीं बढ़ने देते।

तीर्थंकर शास्त्र-निरपेक्ष होते हैं, इसलिए वे देशकाल के औचित्य के अनुसार कार्य करने को स्वतंत्र होते हैं।

महावीर जिस युग में हुए वह घोर जातिवाद का युग था। ब्राह्मण उच्च माने जाते थे और शूद्र नीच। चाण्डाल सर्वथा अछूत माने जाते थे। महावीर ने उन चाण्डालों को भी अपने संघ में प्रव्रजित होने की छूट दी थी।

भगवान महावीर जातिवाद के घोर विरोधी थे। आत्मौपम्य के सिद्धान्त की स्थापना करने वाला अहिंसावादी जातिवाद का समर्थक हो नहीं सकता। महावीर के शासन में न-जाने कितने शूद्र और चाण्डाल दीक्षित हुए होंगे। महावीर यदि तीर्थंकर नहीं होते तो उनके अनुयायी उन्हें ऐसा करने से अवश्य रोकते।

अर्जुन मालाकार सुदर्शन सेठ के साथ महावीर की शरण में आ गया। महावीर ने उसे अपने धर्मसंघ की शरण में ले लिया। ऐसे क्रूरकर्मा व्यक्ति को सहसा अपने साधुसंघ में सम्मिलित कर लेना अतर्कित घटना थी। यदि महावीर आचार्य होते तो ऐसा करने से अवश्य झिझकते किन्तु वे तीर्थंकर थे, इसलिए उन्हें वैसा करने में कोई संकोच नहीं हुआ।

महावीर सचमुच महावीर थे। तीर्थंकर होने के पश्चात वे पूर्ण अभय थे। उनकी भयविमुखता ने ही उन्हें महावीर बनाया था। यदि वे भयसंकुल होते तो महावीर नहीं बन पाते। अभय का बीज अनासक्ति या अपरिग्रह है। यदि महावीर के मन में शिष्यों और अनुयायियों का लोभ होता तो वे अभय नहीं हो पाते। यदि महावीर के मन में सामाजिक प्रतिष्ठा और प्रशंसा की आसक्ति होती तो वे अभय नहीं हो पाते। अनगिन बार देवताओं ने उनके सामने नाटक किया, पर उनका अन्तःकरण कभी उन नाटकों से आकृष्ट नहीं हुआ। उनके सामने नाटक होते हैं, उसे लोग क्या समझेंगे, इस आशंका से वे कभी विचलित नहीं हुए।

उनके व्यक्तित्व और कर्तृत्व की अनगिनत घटनाएं हैं। मैंने केवल इस ओर अंगुलि-निर्देश किया है।

महावीर तीर्थंकर थे, इसलिए वे विधि और निषेध में स्वतंत्र थे। यह स्वतंत्रता सहज ही प्राप्त नहीं होती। इसके लिए बहुत खपना पड़ता है। जैन दर्शन के अनुसार तीर्थंकर मनुष्य ही होता है। वह कोई देव रूप में अवतार नहीं होता। जिसकी साधना उच्च कक्षा में पहुंच जाती है, तीर्थंकर हो जाता है।

❑❑❑

महापुरुष महावीर

- डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

मानव-जाति के उन महापुरुषों में से जिन्होंने अपना ध्यान बाह्य प्रकृति से हटाकर मनुष्य की आत्मा के अध्ययन पर केन्द्रित किया, एक हैं महावीर। उन्हें 'जिन' अर्थात् विजेता कहा गया है। उन्होंने राज्य और साम्राज्य नहीं जीते, अपितु आत्मा को जीता, सो उन्हें महावीर कहा गया है। सांसारिक युद्धों का नहीं, अपितु आत्मिक संग्रामों का महावीर। तप, संयम, आत्मशुद्धि और विवेक की अनवरत प्रक्रिया से उन्होंने अपना उत्थान करके दिव्यपुरुष का पद प्राप्त कर लिया। उनका उदाहरण हमें भी आत्मविजय के उस आदर्श का अनुसरण करने की प्रेरणा देता है।

जो संयम द्वारा, निष्कलंक जीवन द्वारा इस स्थिति को प्राप्त कर ले, वह परमेष्ठी है। जो पूर्ण मुक्ति प्राप्त कर ले वह अर्हत् है। वह पुनर्जन्म की संभावना से, काल के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त है। महावीर के रूप में हमारे समक्ष ऐसे व्यक्ति का उदाहरण है जो सांसारिक वस्तुओं को त्याग देता है, जो भौतिक बन्धनों में नहीं फंसता, अपितु जो मानव-आत्मा की आंतरिक महिमा को अधिगत कर लेता है।

संयम की आवश्यकता, अहिंसा और दूसरे के दृष्टिकोण एवं विचार के प्रति सहिष्णुता और समझ का भाव, ये उन शिक्षाओं में से कुछ हैं, जो महावीर के जीवन से हम ले सकते हैं। यदि इन चीजों को हम स्मरण रक्खें और हृदय में धारण करें तो हम महावीर के प्रति अपने महान ऋण का छोटा-सा अंश चुका रहे होंगे।

❑❑❑

महावीर की विशेषता

- संत विनोबा भावे

महावीर स्वामी ने तोड़ने का काम नहीं किया, हमेशा जोड़ने का काम किया। उनके साथ बातचीत के लिए कोई उपनिषद का अभिमानी आता तो उसके साथ वे उपनिषद के आधार पर चर्चा करते थे, गीता का अभिमानी आता तो गीता का आधार लेकर चर्चा करते, कोई वेद का अभिमानी आता तो वेद का आधार लेकर चर्चा करते, बौद्धों के साथ उनके ग्रन्थ का आधार लेकर चर्चा करते। उन्होंने अपने विचार किसी पर जरा भी लादे नहीं, वह सामने वाले के विचार के अनुसार सोचकर समाधान देते थे।

❑❑❑

महावीर और मूक जगत

- आचार्य रजनीश

महावीर की चेष्टा रही है कि पौधे, पशु-पक्षी, देवी-देवता, सब तक, जीवन के जितने तल हैं उन सब तक, उन्हें जो मिला है उसकी खबरें पहुँचे। महावीर के बाद ऐसी कोशिश करने वाला दूसरा नहीं हुआ। यूरोप में फ्रांसिस ने थोड़ी कोशिश की है, पशु-पक्षियों से बातचीत करने की। अभी-अभी श्री अरविन्द ने कोशिश की है पदार्थ तत्व पर चेतना के स्पन्दन पहुँचाने की। लेकिन महावीर जैसा प्रयास न पहले कभी हुआ और न बाद में हुआ। वृक्षों, पत्थरों से बातचीत करने के लिये उसी पल जड़ अवस्था, उसी पल मूक अवस्था में उतरना पड़ेगा। रामकृष्ण परमहंस ऐसी जड़ अवस्था में उतरते रहे हैं, मगर महावीर ने इस दिशा में मनुष्य जाति के इतिहास में सबसे अधिक गहरे प्रयोग किये और महावीर की अहिंसा भी इसी मूक, जड़ पदार्थ के तादात्म्य से निकली है। मेरी समझ में यह है कि महावीर ने जितने पशुओं और जितने पौधों की आत्माओं को विकसित किया है, उतना इस जगत में किसी दूसरे ने नहीं किया। यानी आज पृथ्वी पर ज़ो मनुष्य हैं, उनमें से बहुत मनुष्य सिर्फ इसलिए मनुष्य हैं कि उनको पशु योनि या पौधों की योनि में या पत्थर होने में महावीर ने संदेश भेजे थे, और उन्हें बुलवा भेजा था।

इतना ही नहीं परमाणुओं तक में भी महावीर ने खबर पहुँचाने की कोशिश की है। इन प्रयोगों में वे इतने व्यस्त रहे कि चार-चार, पांच-पांच महीनों तक शरीर मृतावस्था जैसी जड़ हालत में रहा और वे निराहार रहे। मगर जिस परमाणु जगत को उन्होंने सत्य का संदेश भेजा, वह भी प्रत्युत्तर में उन्हें कुछ न कुछ देते ही होंगे। जो मनुष्य सारे परमाणु जगत से सम्बन्ध बनाये हुए है, उसे इसी परमाणु जगत से अगर कुछ शारीरिक शक्ति मिल रही हो तो कोई आश्चर्य नहीं। यही उनके भोजन की चिन्ता न करने का सूत्र था।

आज भी यूरोप में एक ऐसी महिला जिन्दा है, जिसने ३० साल से भोजन नहीं किया और पूरी तरह स्वस्थ एवं सुन्दर है। बंगाल में अभी एक महिला की मृत्यु हुई है, उसने ४५ वर्ष तक भोजन नहीं किया, फिर भी स्वस्थ और सुखी थी। वैज्ञानिक कारण ढूंढ़ने में लगे हैं। मुझे ऐसा लगता है कि यह सूक्ष्म परमाणु जगत ही उन्हें भोजन देता है।

प्रकृति भी महावीर के प्रतिकूल होने की कोशिश नहीं करती, बल्कि अनुकूल होने की कोशिश करती है, क्योंकि जिसने प्रकृति से इतना अधिक प्रेम किया हो, वह प्रकृति भी कैसे प्रतिकूल होने की कोशिश करेगी।

महावीर ने देवताओं तक भी संदेश भेजे हैं। उनकी १२ वर्ष की पूरी साधना अभिव्यक्ति सम्प्रेषणा की साधना है। शब्दों के बिना भी संदेश भेजे जा सकते हैं जैसे तरंगों के द्वारा, जिसे हम 'वायरलेस' कहते हैं, सन्देश पहुँचाना। मनुष्य के साथ घटना 'शब्द' के साथ घटी है। देवताओं से सम्पर्क सीधे अर्थ द्वारा होता है। मनुष्य के पास शब्द रूपी तरंगें पहुँचती हैं, 'अर्थ' वह स्वयं खोजता है। तब बड़ी मुश्किल हो जाती है। व्याख्याओं और टीकाओं की लाइन खड़ी हो जाती है।

❑ ❑ ❑

भगवान् महावीर–जीवन और दर्शन

– मुनि श्री राकेश कुमार

महावीर अवतार और देव नहीं, मानव बनकर संसार में आए थे। इस मिट्टी में वे पले-पुसे थे और इसी मिट्टी पर उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त किया था। उनके जीवन की कहानी आकाश की उड़ानें नहीं हैं, उनके स्वर कल्पना की लहरियों से नहीं उठे थे। अनुभूति की कसौटी पर खरे उतर कर हमारे सामने आये थे। उनकी शारीरिक और मानसिक संवेदनाएं मानवेतर नहीं थीं। उनकी सतत् गतिशील मानवता ने उन्हें महामानव बना दिया, जिसकी पृष्ठभूमि में विजय का संदेश है। वह विजय थी अन्धकार पर प्रकाश की, असत् पर सत् की और मृत्यु पर अमरत्व की।

आदर्श श्रमण– श्रम, शम और सम की साधना करने वाले महावीर 'श्रमण' कहलाए। जैन आगम वाङ्मय में 'समणे नाथपुत्ते' उनका मुख्य विशेषण रहा है। महावीर एक राजकुमार थे, उनके पास भौतिक सुख साधनों की कमी नहीं थी। पर जीवन की इस बाहरी दिशा में उन्हें तृप्ति नहीं मिली। उन्हें संसार में बहुत बड़ा काम करना था।

महावीर गृहस्थ जीवन में भी बड़े निर्लिप्त भाव से रहे। कीचड़ में रहने वाले कमल-पत्र के उदाहरण को उन्होंने पूरा चरितार्थ किया। उनका सारा व्यवहार गहरा आदर्श लिए हुआ था, श्रमण जीवन की कठोर साधना में वे बड़ी दृढ़ता के साथ आगे बढ़े थे। महावीर का तितिक्षा धर्म बहुत प्रसिद्ध है। शारीरिक और मानसिक सभी परिषहों को उन्होंने बड़ी समाधि के साथ सहन किया।

अपनी मंजिल पर पहुँचने के लिए भगवान् महावीर ने घोर तप किया। अपने पूर्ववर्ती २३ तीर्थंकरों से भी उन्होंने अधिक कष्ट सहन किए। किन्तु भगवान महावीर ने तपस्या का मतलब केवल भूखा रहना ही नहीं समझा था। उनके जीवन में अनेक यौगिक प्रयोग चलते थे। उनकी हर तपस्या के साथ ध्यान का अभिन्न सम्बन्ध था। उन्होंने भूखे रहने को बाहरी तप बताया व ध्यान और स्वाध्याय को आभ्यन्तर तप।

महावीर ने उस समय के अनेक अनार्य असभ्य प्रदेशों में भी विहार किया, जहाँ उग्र परिषहों का सामना करना पड़ा। पर उन्होंने किसी का सहारा नहीं लिया। स्वावलम्बन के आधार पर आगे बढ़े थे वे।

उन्होंने वाणी की अपेक्षा कर्म से अधिक प्रशिक्षण दिया।

❑❑❑

समत्व स्रष्टा भगवान महावीर

- सांध्वी अणिमाश्री

'समया धम्म मुदाहरे मुणी''

भगवान महावीर का यह पावन उद्‌घोष रहा है। कथनी-करनी का साकार प्रतिबिम्ब भगवान महावीर के जीवन में देखने को मिलता है। अभिभावकों के अगाध वात्सल्य से लालित-पालित, राजकीय अतुल्य वैभव को त्याग, सुकुमार राजकुमार महावीर ने दुष्कर दीक्षाव्रत को स्वीकार किया और तत्काल ही आत्म-शोध के मार्ग को अपनाया, निर्वाण प्राप्ति अपना लक्ष्य बनाया। 'न पीछे हटाया कदम को बढ़ाकर, गर दम भी लिया तो मंजिल को पाकर'। आत्म-दर्शन के महान उद्‌देश्य के पीछे अतुल साहस और अटूट निष्ठा ही सफलता के द्योतक थे।

भगवान के साधना-काल में समुपस्थित उपसर्गों की आश्चर्य-भूत कहानी पढ़ने मात्र से कलेजे में कंपन होता है। इतनी प्रतिकूलता में कितनी समता, मनुष्य होंकर देवताओं द्वारा दत्त कष्टों को समचित्त सहन करना, यह थी भगवान की उदात्त समता, अद्‌भुत सहनशीलता। वस्तुतः साधना पथ कंटकाकीर्ण पथ है। भगवान के साधनाकाल के साढ़े बारह वर्षों की अवधि में देव, मनुष्य तथा तिर्यंचों द्वारा अनेक अनुकूल प्रतिकूल उपसर्ग उत्पन्न हुए। सामान्य व्यक्ति जहाँ कष्टों के मार्ग को टालते हुए अन्य पथ का अनुसरण करते हैं, महापुरुष लक्ष्य निरूपण करके उसी पथ पर आगे बढ़ते हैं। अपने दारुण कर्मों के क्षय के लिए भगवान अनार्य भूमि में पधारे। वहाँ उचित द्रव्य पर निर्निमेष दृष्टि से ध्यान कर रहे थे। इन्द्र ने ज्ञान द्वारा जान भगवान की प्रशंसा के गीत गुनगुनाए। एक तरफ जहाँ शौर्य के गीत गाए जाते हैं, वहाँ दूसरी तरफ असूया का आलाप होता है। इन्द्र की सभा में उपस्थित ईर्ष्यालू संगमदेव कब सहन कर सकता था ? तत्काल भगवान के सन्निकट प्रस्तुत हुआ और विकराल रूप धारण किया। ध्यान से विचलित करने के लिये एक ही रात्रि में पिशाच, व्याघ्र, सर्प, बिच्छू आदि के तथा देवांगना के हावभावपूर्ण अनुकूल-प्रतिकूल बीस मारणान्तिक उपसर्ग दिए। लेकिन भगवान तनिक भी विचलित नहीं हुए। उनके चेहरे पर न रोष था, न आक्रोश, केवल मात्र सन्तोष के सागर में वे गोते लगा रहे थे। अन्ततोगत्वा संगमदेव पराजित होकर अपने गन्तव्य स्थान को चला गया। भगवान अपनी तपःपूत साधना में सफल बने।

भगवान की भाषा में समता ही धर्म है और विषमता अधर्म। राग-द्वेष दोनों विषमता के प्रतीक हैं। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, क्षमा, अभय आदि गुणों की जड़ एकमात्र समता है। ये सारे तो समतारूपी वृक्ष की शाखाएं, पत्र, पुष्प फल आदि हैं।

❑❑❑

भगवान महावीर

- डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल

भगवान महावीर तपः प्रधान संस्कृति के उज्ज्वल प्रतीक हैं। भोगों से भरे इस संसार में एक ऐसी स्थिति भी संभव है जिसमें मनुष्य का अडिग मन निरन्तर संयम और प्रकाश के सान्निध्य में रहता हो- इस सत्य की विश्वसनीय प्रयोगशाला भगवान् महावीर का जीवन है। वर्द्धमान महावीर गौतम बुद्ध की भांति नितान्त ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। माता-पिता के द्वारा उन्हें भी हाड़-मांस का शरीर प्राप्त हुआ था। अन्य मानवों की भांति वे भी कच्चा दूध पीकर बढ़े थे; किन्तु उनका उदात्त मन अलौकिक था। तम और ज्योति, सत्य और अनृत के संघर्ष में एक बार जो मार्ग उन्होंने स्वीकार किया, उस पर दृढ़ता से पैर रखकर हम उन्हें निरन्तर आगे बढ़ते हुए देखते हैं। उन्होंने अपने मन को अखण्ड ब्रह्मचर्य की आँच में जैसा तपाया था, उसकी तुलना में रखने के लिए अन्य उदाहरण कम ही मिलेंगे। जिस आध्यात्म केन्द्र में इस प्रकार की सिद्धि प्राप्त की जाती है उसकी धाराएं देश और काल में अपना निस्सीम प्रभाव डालती हैं। महावीर का वह प्रभाव आज भी अमर है। अध्यात्म के क्षेत्र में मनुष्य कैसा साम्राज्य निर्मित कर सकता है, उस मार्ग में कितनी दूर तक वह अपनी जन्मसिद्ध महिमा का अधिकारी बन सकता है, इसका ज्ञान हमें महावीर के जीवन से प्राप्त होता है। बार-बार हमारा मन उनकी फौलादी दृढ़ता से प्रभावित होता है। कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े रहकर शरीर के सुख-दुःखों से निरपेक्ष रहते हुए उन्होंने काय साधन के अत्यन्त उत्कृष्ट आदर्श को प्रत्यक्ष दिखाया था। निर्बल संकल्प का व्यक्ति उस आदर्श को मानवी पहुँच से बाहर भले ही समझे, पर उसकी सत्यता में कोई संदेह नहीं हो सकता। तीर्थंकर महावीर उस सत्यात्मक परिधि के केन्द्र में अखण्ड प्रज्वलित दीप की भांति हमारे सामने आते हैं। यद्यपि यह पथ अत्यन्त कठिन था; किन्तु हम उनके कृतज्ञ हैं कि उस मार्ग पर जब वे एक बार चले तो न तो उनके पैर रुके और न डगमगाये। उन्होंने अन्त तक उसका निर्वाह किया। त्याग और तप के जीवन को रसमय शब्दों में प्रस्तुत करना कठिन है, किन्तु फिर भी इस सुन्दर जीवन में कितने ही मार्मिक स्थल हैं तथा कितनी ही ऐसी रेखाएं हैं जो उनके मानवीय रूप को साकार बनाती हैं।

सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य, तप और अपरिग्रह रूपी महान आदर्शों के प्रतीक भगवान महावीर हैं। इन महाव्रतों की अखण्ड साधना से उन्होंने जीवन का बुद्धिगम्य मार्ग निर्धारित किया था और भौतिक शरीर के प्रलोभनों से ऊपर उठकर अध्यात्म भावों की शाश्वत विजय स्थापित की थी। मन, वाणी और कर्म की साधना उच्च अनन्त जीवन के लिए कितनी दूर तक संभव है, इसका उदाहरण तीर्थंकर महावीर का जीवन है। इस गम्भीर प्रज्ञा के कारण आगमों में महावीर को 'दीर्घप्रज्ञ' कहा गया है। ऐसे तीर्थंकर का चरित्र धन्य है।

◆◆◆

महावीर का धर्म–जनधर्म

– श्री रिषभदास रांका

भगवान महावीर न तो जैनियों के प्रथम तीर्थंकर थे और न ही अन्तिम। उनके पहले अनेक तीर्थंकर हो गए। इसी युग में भगवान महावीर के पहले २३ हुए और २४वें वह स्वयं थे। भविष्य में भी अनेक तीर्थंकर होंगे, उन्होंने यह भी कहा था। उन्होंने कहा था कि मैं जो धर्म कह रहा हूँ वह नित्य है, ध्रुव है और शाश्वत है। मेरे पहले भी अनेक तीर्थंकरों ने इसे कहा था और भविष्य में भी कहेंगे। उन्होंने कहा था कि सभी जीव सुख से जीना चाहते हैं, दुःख सभी को अप्रिय है, मरना भी कोई नहीं चाहता इसलिए यदि सुख से रहना चाहते हो तो जिस तरह के व्यवहार की दूसरों से अपेक्षा रखते हो वैसा ही व्यवहार दूसरों के साथ करो। उन्होंने दुःख का प्रारंभ दूसरों के साथ परायेपन के व्यवहार को कहा था। उन्होंने सब जीवों के साथ समता के व्यवहार को सुखकर बताया था क्योंकि सभी प्राणियों में आत्मा से परमात्मा, नर से नारायण तथा जीव से शिव बनने की क्षमता है। हर जीव अपने भाग्य का विधाता है, सुख-दुःख का कर्ता है। उनकी समता का आधार गहरा था। उनका वचन दीर्घकाल की साधना का परिणाम था। वे पूर्णतया अनुभवपूर्ण थे। इसी कारण उनके पीछे यह आत्मविश्वास था कि मैं जो कह रहा हूँ वह नित्य है, ध्रुव है और शाश्वत है। उन्होंने कभी नहीं कहा कि तुम मेरी शरण में आओ, मेरी भक्ति करो, मैं तुम्हारा उद्धार कर दूंगा। बल्कि उनका यही उपदेश था कि तुम्हीं अपना उद्धार कर सकते हो, तुम्हीं अपने मित्र हो और तुम्हीं अपने शत्रु। जीव मात्र के प्रति आदर, यह उनका चिन्तन था।

महावीर क्षत्रिय थे। उनका जन्म नाम वर्द्धमान था।। महावीर शब्द उनकी वीरता का परिचायक है। वीर शत्रुओं को जीतता है पर अपने आपको जीतने वाला-अपने दुर्गुणों- कषायों- अहंताओं- ममताओं को जीतने वाला महावीर होता है। ऐसे महावीर की परम्परा वीरत्व की परम्परा है-कायरों की नहीं। तभी महात्मा गांधी ने भी कहा है कि 'अहिंसा वीरों का धर्म है, कायरों का नहीं।'

जैन धर्म नहीं, जनधर्म-महावीर का धर्म उनके समय में निर्ग्रन्थ धर्म कहलाता था। किसी प्रकार की ग्रंथि नहीं-ग्रंथिहीन। मूर्च्छाओं, अशक्तियों और परिग्रहों से दूर, जिसमें किसी प्रकार का आग्रह नहीं, जो सबका धर्म था अर्थात् जन-धर्म, सबके लिए। वह स्त्री का भी उद्धार कर सकता था, पुरुष का भी, गृहस्थ का भी, गृहत्यागी का भी, धनवान का भी और निर्धन का भी, ब्राह्मण का भी, चाण्डाल का भी, नगरवासी का भी, वनवासी का भी। जिसने समता अपनाई फिर वह कोई भी क्यों न हो, अपना उद्धार कर सकता है।

वत्स जनपद में महावीर का विहार

- डॉ. शशिकान्त

(१)

वत्स जनपद में तुंगिय सन्निवेश था जहाँ दत्त ब्राह्मण की यज्ञशाला थी। दत्त की पत्नी करुणा ने मेतार्य नामक पुत्र को जन्म दिया। मेतार्य अपने पिता का अनुगामी था और उसने शीघ्र ही सम्पूर्ण वेद-साहित्य का पारायण कर लिया एवं एक नैष्ठिक याजक बन गया। उसकी शाला में सैकड़ों अन्तेवासी थे। उसने अपने पिता से सुना था- 'पूर्व भारत में श्रमण परम्परा है जो तपस्या पर बल देती है और याज्ञिक कर्मकाण्ड को व्यर्थ बताती है। श्रमण साधु बस्ती से बाहर ठहरते हैं, केवल एक बार आहार के लिये बस्ती में जाते हैं, एक स्थान पर तीन दिन से अधिक नहीं ठहरते, अपने पास परिग्रह नहीं रखते और अक्सर वस्त्र भी धारण नहीं करते, तप-संयम में दृढ़ रहते हैं और मांसाहार नहीं करते। वह जाति-पांति में विश्वास नहीं करते और सभी को उपदेश भी देते हैं और सभी से भिक्षा भी लेते हैं। वह वेद की निन्दा नहीं करते, ब्राह्मण की भी निन्दा नहीं करते, परन्तु वर्णाश्रम को गर्हित बताते हैं और कर्मकाण्ड को वृथा बताते हैं।'

मेतार्य ने अपने अन्तेवासियों से सुना- "श्रमणों में अन्तिम तीर्थंकर के इस काल में होने की अनुश्रुति है और सात तपस्वी तीर्थंकरत्व का दावा करते हैं।"

मेतार्य ने पूछा- "कौन हैं वे तपस्वी और क्या है उनकी प्रकृति ?"

अन्तेवासी- "आर्य ! एक हैं कपिलवस्तु के शाक्य मुनि गौतम बुद्ध जो भोग और त्याग के मध्य का मार्ग दुख से मुक्ति के लिये बताते हैं। उनका एक संघ है और मगधराज बिम्बसार तथा कोसलराज प्रसेनजित उनके भक्त हैं।

दूसरे हैं पूरन कास्सप जो अक्रियावाद का प्रतिपादन करते हैं। उनका कहना है कि दुष्कर्म से पाप और सत्कर्म से पुण्य नहीं होता क्योंकि इन कर्मों का आत्मा पर कोई प्रभाव नहीं होता।

तीसरे हैं मक्खलि गोसाल जो नियतिवादी हैं। वे नग्न रहते हैं और उनके अनुयायी आजीवक कहलाते हैं। उनका कहना है कि जिस प्रकार सूत का गोला फेंकने पर उसके पूरी तरह खुल जाने तक वह आगे बढ़ता जायेगा, उसी प्रकार बुद्धिमानों और मूर्खों के दुःखों का नाश तभी होगा जब वे संसार का समग्र चक्कर पूरा कर चुकेंगे।

चौथे हैं अजित केसकम्बलिन जो उच्छेदवादी हैं। उनका कहना है कि शरीर के भेद के पश्चात् विद्वानों और मूर्खों का उच्छेद होता है, वे नष्ट होते हैं, और मृत्यु के बाद उनका

कुछ भी शेष नहीं रहता।

पांचवें हैं पकुध कच्चायन जो अन्योन्यवादी हैं। उनका कहना है कि पृथ्वी, अप, तेज़, वायु, सुख, दुःख एवं जीव, सात शाश्वत पदार्थ हैं जो किसी के किये, करवाये, बनवाये या बनाये हुए नहीं हैं।

छठे हैं संजय बेलट्ठिपुत्र जो विक्षेपवादी हैं। उनकी परलोक, कर्मफल और मृत्यु के बाद जीव की स्थिति के विषय में कोई निश्चित धारणा नहीं है।

सातवें हैं निर्ग्रन्थ ज्ञातृपुत्र वर्द्धमान महावीर। उनके अनुयायी उन्हें २३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की परम्परा का सूचित करते हैं। नग्न दिगम्बर रहते हैं और पांच महाव्रतों का कठोर पालन करते हैं। उनका चतुर्विध संघ है जिसमें मुनि, आर्यिका, श्रावक एवं श्राविकायें हैं। मुनिसंघ के प्रधान विप्रवर इन्द्रभूति गौतम हैं और आर्यिका संघ की प्रधान सती चन्दना हैं। मगधराज श्रेणिक-बिम्बसार और उनकी रानी चेलना, वत्स की राजमाता मृगावती, अवन्ति की राज-महिषी, वज्जिसंघ के अधिनायक चेटक, मल्ल गण; श्रेष्ठि धन्ना, श्रेष्ठि मृगार, नागरिक सूरदेव और उसकी भार्या धन्या आदि गण्यमान्य नर-नारी उनके श्रावक-संघ और श्राविका-संघ के सदस्य हैं।"

मेतार्य- "साधु ! क्या इन्द्रभूति मगध देशीय वसुभूति गौतम का पुत्र है ?"

अन्तेवासी- "हाँ, विप्र-श्रेष्ठ !"

मेतार्य- "साधु ! क्या चन्दना वही देवी है जिसे एक तपस्वी ने बन्धनमुक्त किया था ?"

अन्तेवासी- "हां, विप्रवर ! और वह तपस्वी यही वर्द्धमान महावीर थे।"

मेतार्य- "साधु !"

अन्तेवासी- "विप्र-श्रेष्ठ ! कम्पिलपुर से कुन्दकोलित और उसकी भार्या पुष्पा आये हैं और यह समाचार लाये हैं कि निर्ग्रन्थ महावीर कौशाम्बी से विहार कर चुके हैं और कल इस सन्निवेश के निकट आयेंगे।"

मेतार्य- "कुन्दकोलित और उसकी भार्या को अतिथिशाला में विश्राम कराओ। कल हम सब अन्तेवासियों के साथ महावीर से भेंट करने चलेंगे।"

(२)

तुंगिय सन्निवेश के ईशानकोण में श्मशान के कोने पर महावीर कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यानमग्न खड़े हैं। उनकी दृष्टि नासाग्र है, ओठों पर मन्द स्मित है और उनकी आभा से चतुर्दिक वातावरण में एक अपूर्व शान्ति है।

कुन्दकोलित और पुष्पा के साथ मेतार्य और उसके अन्तेवासी नमस्कार कर विनयपूर्वक खड़े हो जाते हैं। महावीर उनकी शंका का बोध कर लेते हैं और कहते हैं-

चउहिं ठाणेहिं जीवामणुस्सत्ताते कम्मं पगरेंति,
तंजहा पगतिभद्दयाए, पगतिविणीयाए,
साणुक्कोसयाए अभच्छरियाए।

मेतार्य विचार करता है- "चार कारणों से जीव को मनुष्य जन्म मिलता है। एक तो वह प्रकृति से भद्र हो, दूसरे वह प्रकृति से विनयी हो, तीसरे वह दूसरे के दुःख को दूर करे और चौथे वह दूसरे की समृद्धि देखकर ईर्ष्या न करे।"

महावीर पुनः कहते हैं -

नाणं व दंसणं चेव चरित्तं च तवोतहा।
एस भग्गोति पन्नत्तो जिणेहिं वर दंसिहि।।

मेतार्य पुनः विचार करता है-

"सम्यक्दृष्टि जिन अर्थात् जितेन्द्रिय तीर्थंकरों ने जीव के संसार से बंधन मुक्त होने का मार्ग यह बताया है कि उसे आत्मा के स्वरूप का सम्यक् ज्ञान हो, उसके बारे में सम्यक् श्रद्धान हो, उसका चरित्र कर्मों की निर्जरा के योग्य हो और वह तपश्चरण द्वारा पूर्व कर्मों की निर्जरा करता जाये तथा नये कर्मों का बंध न करे।"

मेतार्य (कुन्दकोलित से) - "हे कुन्दकोलित ! भगवान यथार्थ कहते हैं। मैं आज से उनका शिष्य हूँ।"

(अन्तेवासियों से)- "तुम अब जा सकते हो। गुरु-पत्नी से कहना कि मेतार्य अब मुनि हो गया, उसका मोह न करे।"

(महावीर से)- "भगवन् ! मुझे भी भव-बन्धन से मुक्त करो- दीक्षा दो।" मेतार्य अपने वस्त्र उतार देता है और अपनी मुट्ठी से केश-लोंच करके महावीर के पीछे-पीछे विहार कर जाता है।

मेतार्य महावीर के ग्यारहवें गणधर अर्थात् मुख्य शिष्य हुये।

- ज्योति निकुंज
चारबाग, लखनऊ -२२६ ००४

❑❑❑

कहानी महावीर भगवान की

आओ आओ सुनो कहानी, मानवता उत्थान की।
सत्य-अहिंसा के अवतारी महावीर भगवान की।।
मानव-मानव मध्य बढ़ रही, भेद भाव की खाई थी।
पशुओं में थी त्राहि-त्राहि, हिंसा से थर्राई थी।।
धर्म नाम पर द्वेष दम्भ आडम्बर की बन आई थी।
स्वार्थ असत्य अनैतिकता से, मानवता मुरझाई थी ।।आओ०।।
प्रान्त विहार पुरी वैशाली, राजा थे सिद्धार्थ सुजान।
चैत्र सुदी तेरह को माता, त्रिशला से उपजे गुणखान।।
श्रीवृद्धि सर्वत्र हुई थी, जनता ने सुख पाये थे।
इससे जग में त्रिशलानन्दन, 'वर्द्धमान' कहलाये थे ।।आओ०।।
मदोन्मत्त हाथी के मद को चूर 'वीर' प्रद प्राप्त किया।
दर्शन से शंकायें मिट गईं मुनिजन 'सन्मति' नाम दिया।।
तरु लिपटे विषधर को वश कर 'महावीर' कहलाये थे।
सर्वहितैषी शान्त वीर के सबने ही गुण गाये थे ।।आओ०।।
भोग-रोग सम्पति-विपत्ति है, जब यह भाव समाया था।
कामजयी ने तीस वर्ष में दीक्षा को अपनाया था।।
सर्व परिग्रह त्याग, वर्ष बारह, वन बीच बिताये थे।
मोहादिक कर नष्ट, सर्वज्ञाता 'अरहन्त' कहाये थे ।।आओ०।।
मानव बने महामानव, अब 'तीर्थंकर' पद पाया था।
मानवता उद्धार-हेतु, तब यह सन्देश सुनाया था।
'स्वयं जियो, जीने दो सबको', इससे बढ़ कर धर्म नहीं।
स्वार्थ-हेतु पर को दुख देने से बढ़कर दुष्कर्म नहीं ।।आओ०।।
तीस वर्ष उपदेश सुना अगणित जीवों को ज्ञान दिया।
कार्तिक कृष्ण अमावस्या, तन त्याग, प्राप्त निर्वाण किया।।
ढाई हजार वर्ष से जन-मन वीर-चरण आराधक हैं।
महावीर सिद्धान्त पूर्णतः विश्वशान्ति के साधक हैं ।।आओ०।।
रायचन्द्र ने बापू को वीर-सन्देश सुनाया था।
बापू ने सत्य-अहिंसा से भारत स्वतंत्र करवाया था।।
उन्हीं वीर के आगे 'कौशल' सब मिल शीश झुकायें हम।
आत्म शक्ति को पहिचानें, सच्चे मानव बन जायें हम ।।आओ०।।

– हीरालाल 'कौशल'

अपनी पुरा–सम्पदा की सार–सम्हार कैसे करें

– नीरज जैन

जैनधर्म की प्राचीनता प्रमाणित करने वाले पुरा-अवशेष हमारे देश में पग-पग पर बिखरे हुए मिलते हैं। केवल उन्हें तलाशकर, पहचान कर, उनका संरक्षण और प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता है। पहले मध्यकाल में धार्मिक विद्वेष के कारण और बाद में मुस्लिम शासन काल में हमारे विशाल ग्रन्थालय महीनों तक जलते रहे और हमारे मुनियों-तपस्वियों को भयंकर यातनाओं का सामना करना पड़ा। हमारी सांस्कृतिक धरोहर का भयानक विनाश हुआ। हमारे मन्दिरों-मूर्तियों की तोड़-फोड़ के साथ हमारे सैकड़ों मन्दिरों पर जबरन अधिकार करके उनमें अन्य देवी-देवताओं की स्थापना कर ली गई। अल्पसंख्यक समुदाय के नाते कई शताब्दियों तक हमें ऐसे अत्याचार सहने पड़े हैं।

इस सारे अन्याय के बावजूद हमारी सदाबहार संस्कृति बराबर बढ़ती और फलती -फूलती रही। वह अमर है और अमर रहेगी। पर हमारी सबसे बड़ी हानि तब हुई जब हमने अपने शिल्प कला के अवशेषों को व्यर्थ और महत्त्वहीन मानकर अपने हाथों उनका विनाश प्रारम्भ किया। हजारों खण्डित मूर्तियां और मूर्तिखण्ड हमने अपने हाथों से नदियों-तालाबों और कुओं में डाल दिये। हजारों शास्त्रों को अधूरा या छिन्न-भिन्न मानकर या अविनय के डर से हमने जल-समाधि दे दी। प्राचीन मुद्राओं को धातु के मोल बेचने के लिये गला दिया। हमारे इस दुष्कृत्य से हमारे गौरवशाली इतिहास की कड़ियाँ छिन्न-भिन्न हो गईं। उससे हमारे इतिहास की अपूरणीय क्षति हुई है। अपने आपको दुनिया की नज़रों में गिराने का यह अनर्थ केवल अपने अज्ञानवश हमने किया है।

हमारे देश पर अंग्रेजों का शासन इस दृष्टि से बुरा नहीं रहा। अंग्रेजों ने भले ही हमारे ऊपर डाका डाला, हमारे देश की महत्त्वपूर्ण कलाकृतियों को अपने देश ले गये, पर उन्होंने उस सामग्री को नष्ट नहीं किया। उसे ऐतिहासिक दस्तावेज की तरह प्रचारित किया और दुनिया को देखने के लिये सुरक्षित किया। उन्होंने ही हमें अपनी पुरा-सम्पदा का महत्त्व समझाया और उसकी रक्षा करने की प्रेरणा दी। इसके लिये हमें उनका आभार मानना पड़ेगा। यह सब बीते हुए कल की बात है। अब हमें यह सोचना है कि आज हम इस दिशा में क्या कर सकते हैं या क्या करना चाहिये।

पुरावशेषों की पहचान

हमारी जानकारी में कहीं भी जब और जहाँ कोई पुरा-अवशेष, खण्डित मन्दिर, मूर्ति, शिलालेख, शास्त्र या अन्य कोई प्राचीन सामग्री आवे, तब सबसे पहले हमें उसकी पहचान करके यह निर्धारण करने की आवश्यकता है कि क्या वह सामग्री जैन धर्म या इतिहास से संबंधित है ? इसके लिये उस सामग्री के कैमरा फोटोग्राफ तैयार कराना बहुत आवश्यक है। वे फोटो जानकार विद्वानों और संस्थाओं को भेजकर हम सामग्री का महत्त्व निर्धारित कर सकते हैं। फोटो लेते समय प्रकाश की दिशा ऐसी रखें जिससे उसमें शिल्प के गुठाव स्पष्ट झलक सकें।

प्राप्त सामग्री पर यदि कहीं कोई लेख हो तो उसका चित्र लेते समय उसमें सावधानी से खड़िया या कोयला इस प्रकार फेर लेना चाहिये जिससे अक्षर उभर कर फोटो में पढ़े जा सकें। फोटो लेने की इस प्रक्रिया में कभी भी शिल्प पर तेल-घी या आइल पेण्ट का प्रयोग नहीं करना चाहिये। यदि फोटो लेते समय शिल्प के बगल में एक साधारण स्केल सीधा टिकाकर रख दिया जाये तो फोटो में ही शिल्प के माप का अंदाज हो जाता है।

शिल्प की सफाई

किसी भी मूर्ति या शिल्प को साफ करने की आवश्यकता पड़े तो साफ पानी से टूथब्रश या दातून की नरम कूंची से सावधानी से उसे साफ करना चाहिये। सफाई के काम में तार वाले ब्रश का या कील-कांटे आदि का उपयोग कभी नहीं करना चाहिये, इससे शिल्प पर रगड़ के निशान पड़ने का डर रहता है। कागज के पुराने पन्नों को बहुत सम्हालकर सहेजकर रखना चाहिये। इसके लिये कोरे नये कागज की तह में हर पन्ने को रखना सुरक्षित उपाय है। उसकी लिखावट-चित्र आदि की सफाई करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये।

हमारी कानूनी स्थिति

भारत सरकार का 'एण्टीक्युटीज एण्ड एनसिएण्ट मान्यूमेण्ट्स, साइट्स एण्ड रिमेन्स एक्ट' उन सारी इमारतों, मूर्तियों और कलाकृतियों पर स्वयमेव लागू हो जाता है जिनकी आयु या जिनका निर्माण काल एक सौ वर्ष से अधिक हो। प्रादेशिक कानून इसके अलावा है। भूगर्भ से प्राप्त होने वाली सामग्री पर 'ट्रेजर ट्रोव्ह एक्ट' भी लागू होता है। इन कानूनों के अंतर्गत भूगर्भ से प्राप्त होने वाली सारी सामग्री पर, जिसका कोई व्यक्ति या संस्था वैधानिक स्वामी न हो, शासन का अधिकार होता है। फिर वहाँ की किसी भूमि को खोदना और किसी भी सामग्री को वहाँ से हटाना, डिफेस करना, तोड़ना या उसकी मरम्मत करना दण्डनीय अपराध माना गया है। यह बहुत आवश्यक है कि ऐसी हालत में कानून को

समझकर या सक्षम व्यक्ति से परामर्श लेकर ही कोई कदम उठाना चाहिये।

यहाँ यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि यदि हम किसी मूर्ति या मन्दिर आदि पर पहले से अपना पारम्परिक नित्य पूजा-अर्चना का अधिकार सिद्ध कर सकें तो शासन का कोई कानून हमें उस अधिकार से एक दिन के लिये भी वंचित नहीं कर सकता। ऐसे अधिकार की पुष्टि करने वाले प्रमाण हमें संजोकर रखना चाहिये।

प्राचीन सामग्री का पंजीकरण

सभी प्राचीन वस्तुओं का पुरातत्व विभाग में पंजीकरण कराना कानूनन अनिवार्य है। नहीं कराना अपराध माना गया है। पंजीकरण के लिये प्रायः हर जिले में पुरातत्व पंजीयक अधिकारी हैं। उनसे आवेदन पत्र लेकर उसके साथ वांछित संख्या में शिल्प के फोटो लगाकर आवेदन करना चाहिये। पंजीयन हो जाने पर एक फोटो के साथ उसका क्रमांक वाला प्रमाणपत्र मिलता है, जो शिल्प पर हमारे स्वामित्व का दस्तावेज है।

पंजीकरण का एक और लाभ यह भी है कि कभी सामग्री की चोरी हो जाय या उसे कोई तोड़-फोड़ दे तो यह प्रमाणपत्र और उसके साथ का प्रमाणित फोटो उस सामग्री को न्यायालय से वापस पाने में और अपराधी को दण्ड दिलाने में एक मान्यता प्राप्त साक्ष्य के रूप में काम आता है। पूजित प्रतिमाओं का भी पंजीकरण कराया जा सकता है और कराया जाना चाहिये। पंजीकरण कराने से हमारा स्वामित्व या पूजाधिकार कहीं बाधित/खण्डित नहीं होता।

सुरक्षा और संरक्षण

प्राचीन सामग्री की सुरक्षा और संरक्षण सबसे कठिन कार्य है, पर यही हमारा सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य भी है। इसके लिये हमें बहुत विवेकपूर्वक तथा इतिहास और पुरातत्व के विद्वानों के साथ परामर्श और सोच-विचार करके ही कोई काम करना चाहिये। आजकल प्राचीन मन्दिरों को गिराकर उनकी जगह नवीन-निर्माण का दौर चल रहा है। कहीं सुन्दरता के नाम पर और कहीं वास्तु-दोष आदि के नाम पर सैकड़ों वर्षों से पूजित वेदियाँ और जिनालय गिरा दिये जाते हैं। संस्कृति-संरक्षण की दृष्टि से विचार करें तो ऐसी बिना विचारे की गई तोड़-फोड़ किसी भी प्रकार हमारे हित में नहीं है। वह एक 'आत्मघाती' कदम है जिसके माध्यम से हम अपने हाथों अपने इतिहास के प्रबल और अकाट्य साक्ष्यों को नष्ट कर रहे होते हैं। यह कार्य अपने पूर्वजों के साथ विश्वासघात करने जैसा है और आपको हमेशा इससे बचना है।

- शान्ति-सदन, कम्पनी बाग
सतना (म० प्र०) - ४८५ ००१

अतीत और वर्तमान में जैन पत्र–पत्रिकायें

– डॉ० ज्योति जैन

जैन पत्र-पत्रिकाओं ने प्रकाशन की एक लम्बी यात्रा तय की है और वे भारतीय संस्कृति एवं भारतीय जागरण के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चली हैं। यह कहना कठिन है कि पहला जैन पत्र कौन है ? अब तक प्राप्त जानकारी के आधार पर प्रथम जैन पत्र गुजराती मासिक 'जैन दिवाकर' था जो अहमदाबाद से छगनलाल उमेशचंद द्वारा १८७५ ई० में प्रकाशित हुआ था। हिन्दी भाषा में निकलने वाला प्रथम जैन पत्र पं० जियालाल जैन ज्योतिषी द्वारा फर्रूखनगर से १८८४ ई० में प्रारंभ 'जैन' साप्ताहिक प्रकाशित हुआ था। सितम्बर १८८४ में शोलापुर से सेठ रावजी हीराचन्द नेमचन्द दोषी ने मराठी, गुजराती, हिन्दी मासिक 'जैन बोधक' प्रकाशित किया। इस सम्बन्ध में डॉ० ज्योति प्रसाद जैन ने लिखा है, " जैन बोधक मराठी का तो सर्वप्रथम जैन पत्र पुरखा है ही, वर्तमान जैन पत्र-पत्रिकाओं में सर्वाधिक प्राचीन है और इने-गिने सर्वाधिकजीवी भारतीय पत्रों में से एक है।' जैन गजट, वीर, जैन मित्र, अनेकांत आदि पत्र एवं तुलसी प्रज्ञा, श्रमण आदि शोध पत्रिकायें लम्बे समय से अपनी यात्रा जारी रखे हैं।

विश्व में आत्म-स्वातंत्र्य, व्यक्ति-स्वातंत्र्य की घोषणा करने वाला धर्म जैन धर्म ही है। कोई भी संस्कृति/धर्म/दर्शन राजनैतिक पराधीनता की अवस्था में फल-फूल नहीं सकते। जैन समाज ने स्वतंत्रता आंदोलन में समर्पित होकर भाग लिया। जैन पत्र-पत्रिकायें भी इस दिशा में पीछे नहीं रहीं। परतंत्रता के जमाने में भी हमारी पत्रिकायें निर्भय होकर स्वतंत्रता का समर्थन करती रहीं। खादी एवं स्वदेशी भावना को प्रचारित करने के लिए जैन पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञापन तक प्रकाशित किये गये थे।

भारतीय संस्कृति एवं सामाजिकता के साथ जैन पत्रिकायें हमेशा जुड़ी रहीं। देश का स्वतंत्रता आंदोलन हो, प्राकृतिक विपत्ति का समय हो या सामाजिक आन्दोलन हो, हरिजन मंदिर प्रवेश का मुद्दा हो, सामाजिक कुरीतियां, बाल विवाह, दहेज, मृत्यु भोज हो या सामाजिक अपव्यय, पंचकल्याणक समारोह के समाचार, नशाखोरी या आचार-विचार का मामला हो, या गोलाकोट की खंडित मूर्तियों का प्रसंग हो, ये सभी पत्र-पत्रिकाओं में खोजपूर्ण लेख, कहानी, विचार, पद्य आदि के द्वारा हमेशा प्रकाशित होते रहे हैं। 'अहिंसा परमो धर्मः' और 'परस्परोपग्रहो जीवानां' का सिद्धान्त हमारी पत्र-पत्रिकाओं का मुख्य केन्द्र बिन्दु रहा है।

चाहे पुंरातत्व हो या कला, संस्कृति हो या धर्म, भाषा या साहित्य की बात हो, अथवा दर्शन की, और तो और व्यक्तिगत महिमा-मंडन आदि की सभी की भरपूर सामग्री हमारी पत्र-पत्रिकाओं में रहती है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से खूब विचार व्यक्त किये जाते हैं और खूब लिखा जाता है। विचारों का मतभेद स्वागत योग्य होता है, क्योंकि मतभेदों से ही किसी बात के विभिन्न पहलू उभर कर सामने आते हैं। पर ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि मतभेदों को पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से व्यक्त कर शीतयुद्ध जैसी स्थिति बना दी जाये अथवा मतभेद के स्थान पर मन-भेद हो

जाये। वैचारिक आदान-प्रदान बौद्धिकता की पहचान है। आलोचना करना किसी भी व्यक्ति/संस्था/समाज की सफलता का संकेत है, पर लक्ष्यहीन आलोचनायें हमारी मानसिक गुलामी की प्रतीक हैं।

यह सत्य है कि लेखन, चिन्तन समसामयिक होना चाहिए, क्योंकि पत्र-पत्रिकायें समाज की दर्पण होती हैं। पं० नाथूराम प्रेमी, पं० जुगल किशोर मुख्तार, डॉ० ज्योति प्रसाद जैन, पं० चैनसुखदास, डॉ० हीरालाल, पं० अयोध्या प्रसाद गोयलीय, डॉ० नेमिचन्द शास्त्री प्रभृति विद्वानों, साहित्यकारों, पत्रकारों का उनकी लेखनी के कारण ही विशिष्ट स्थान रहा है। उनका विद्वत्तापूर्ण लेखन और सटीक सम्पादन-कौशल देखते-पढ़ते ही बनता था। **आज भी जैन गजट, शोधादर्श आदि के सम्पादकीयों को पाठकवर्ग बड़ी रुचि से न केवल पढ़ता है बल्कि अपने विचार भी प्रकट करता है।** यहां तक कि विज्ञान विषय को समेटे 'अर्हत् वचन' जैसी पत्रिकायें विदेशी लेखकों को भी आकर्षित करती हैं।

आजकल समाज का दर्पण कही जाने वाली अधिकांश पत्र-पत्रिकायें पंचकल्याणक समारोह, दीक्षा समारोह, जन्म-जयन्ती समारोह, संस्थाओं के चुनाव, व्यक्ति विशेष के महिमा-मण्डन और तस्वीरों आदि से भरी रहती हैं। पत्र-पत्रिकाओं का परम्परा से विकसित रूप चल रहा था, लेखनी धर्म के मार्ग पर आगम को साथ लिये चल रही थी, किसी भी पहलू पर निष्पक्ष भाव से मंथन होता था, किन्तु हमारी दोहरी मानसिकता ने आज सम्पूर्ण जैन पत्रकारिता को चरमरा सा दिया है। आवश्यकता है बिना किसी पूर्वाग्रह के पत्र-पत्रिकाओं की गरिमा को बनाये रखें। सामाजिक-धार्मिक विचारों पर मंथन एवं लेखन हमारी बौद्धिकता है, हमारा सामाजिक एवं धार्मिक कर्त्तव्य भी है। परन्तु पत्रिकाओं में विचारों के स्तर एवं मर्यादा का उल्लंघन नहीं होना चाहिए, पत्र-पत्रिकायें स्तरहीन एवं व्यर्थ की सामग्री से परहेज रखें और हाँ पत्रिकायें केवल दर्शनीय नहीं पठनीय भी बनें।

आज कोई भी ऐसी लायब्रेरी नहीं है जहां हमारी पत्र-पत्रिकाओं का पूरा संकलन मिल जाये। अतः आवश्यकता है एक ऐसी लायब्रेरी की जहां सम्पूर्ण जैन पत्र-पत्रिकायें स्थान पा सकें और जैन समाज के धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, आर्थिक विकास को सुरक्षित रखा जा सके।

पत्र-पत्रिकायें हमारे आत्मालोचन, सांस्कृतिक जागरण एवं मानसिक खुराक की प्रतीक हैं। हमने इन्हें कभी आंर्थिक या व्यावसायिक लाभ का साधन नहीं बनाया। इसीलिये ये पूजनीय भी हैं। आज कुछ पत्रिकायें व्यावसायिक भी बन गयी हैं। आंकड़े बताते हैं कि पूरे देश में अत्यधिक संख्या में जैन पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित हो रही हैं। तब ये जैन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप से प्रचार-प्रसार करने का सबसे अच्छा साधन सिद्ध हो सकती हैं। समस्याओं में उलझे व्यक्ति, समाज, देश, विश्व या यूं कहें कि सम्पूर्ण मानवता को शान्ति का सन्देश इन पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से दिया जा सकता है। अन्त में रामधारी सिंह दिनकर की ये पंक्तियां स्मरण आ रही हैं-

कलम देश की बड़ी शक्ति है, भाव जगाने वाली।
दिल ही नहीं दिमागों में भी, आग लगाने वाली।।

शिक्षक आवास - ६,
श्री कुन्दकुन्द जैन महाविद्यालय परिसर,
खतौली- २५१ २०१

कटोरी सीधी या उलटी

– जस्टिस एम. एल. जैन

सिद्ध आत्माएं जहां रहती हैं क्या उसका सही नाम सिद्ध शिला है? सिद्धशिला का आकार क्या है? पूजा में कैसा होना चाहिए उसका प्रतीक? आचार्य विद्यासागर जी ने प्रचलित अर्द्धचन्द्राकार प्रतीक **U** के विपरीत विचार प्रगट करके इसका आकार छत्र की भांति **∩** इस प्रकार होना तय कर दिया है। इसी सूत्र को पकड़ कर श्री रतनलाल जी बैनाड़ा ने जैन गजट (१८.२.१६६६ पृ.५) में बताया कि इसका प्रतीक **∩** ही शास्त्र सम्मत है किन्तु अब शोधादर्श ४१/१५६ पर ब्र. श्री अशोक जैन ने अफसोस जाहिर किया है कि पुराना **U** प्रतीक लोग छोड़ने लगे हैं। इस दुविधा की हालत में मैं भी कुछ निवेदन करना चाहता हूं–

१. मोक्ष शिला, सिद्ध शिला, निर्वाण शिला, इस नाम की शिला यदि कोई है, तो यह मध्यलोक की वह शिला है जिस पर तीर्थंकरों ने बैठकर या खड़े रहकर अपनी अंतिम तपस्या में लीन शरीर त्याग कर मोक्ष की ओर प्रयाण किया था। इसका जिक्र पुराणों में इस प्रकार है–

गुणभद्र (८०३–८६५) के उत्तर पुराण सर्ग ५४/२६६–२७२ में वर्णन है कि भगवान चन्द्रप्रभु सारे आर्य देशों में तीर्थ प्रवर्तन कर सम्मेदशिखर पहुंचे और वहां–

विहारमुपसंहृत्य मासं सिद्धशिला तले
प्रतिमा योग मासाद्य सहस्र मुनिभिस्सह ५४/२७०
अयोग पदमासाद्य तर्य शुक्लेन निर्रहरन्
शेष कर्माणि निर्लुप्त शरीर परमोऽभवत् ५४/२७२

वे विहार बंद करके एक हजार मुनियों के साथ सिद्ध शिला पर स्थित होकर प्रतिमा योग धारण कर चौथे शुक्लध्यान से अयोग केवली पद प्राप्त करके शेष कर्मों को नष्ट कर निर्लुप्त शरीर परम (सिद्ध) हो गए।

जिनसेन (७७८–८२८) के हरिवंश पुराण (सर्ग ६०/३६–३७) के अनुसार धीवर पुत्री पूतिगन्धा राजगृह गई और

अत्र सिद्ध शिलां वन्द्यां वन्दित्वा च स्थिता सती
कृत्वा नील गुहायां सा सती सल्लेखनां मृता।

यहां वन्दना करने योग्य सिद्ध शिला थी उसकी वन्दना कर नीलगुहा में रहने लगी और सल्लेखना करके मृत्यु को प्राप्त हुई।

पद्मपुराण सर्ग ४८/१८६–२२२ में वर्णन है कि अनंतवीर्य मुनि ने रावण को

बताया कि–

योो निर्वाण शिलां पुण्यामतुलामर्चितां सुरैः
समुद्यतां स ते मृत्योः कारणत्वं गमिष्यति। १८६

जो देवों द्वारा पूजित अनुपम पुण्यमयी निर्वाण शिला को उठावेगा वही तेरा मृत्यु का कारण होगा। यह वृतान्त सुनकर राम लक्ष्मण आदि उस शिला के दर्शन के लिए गए और वहां वे सब वन्दना करने लगे कि–

अस्यां च ये गता सिद्धिं शिलायां शील धारिणः
उपगीताः पुराणेषु सर्व कर्म विवर्जिताः। २०८

शील को धारण करने वाले जो भी पुरुष इस सिद्ध शिला से सिद्धि को प्राप्त हुए हैं उनकी हम बार–बार वन्दना करते हैं।

हरिवंश पुराण में सर्ग ५/३४७–३४८ में पाण्डुक, पाण्डुकम्बला, रक्ता व रक्तकम्बला ये चार शिलाएं बताई हैं जो अर्द्धचन्द्राकार हैं। तो फिर सिद्धशिला (?) भी वैसी ही होगी।

२. मनीषी रतनलाल बैनाड़ा के द्वारा दिए गये उद्धरणों को भी यदि गौर से पढ़ा जाए तो जाहिर होता है कि त्रिलोकसार (गाथा ५५७) के अनुसार उर्ध्व लोक के अंत में ईषत्प्राग्भार आठवीं पृथ्वी है–

तम्मज्झे रुप्पमयं छत्तायारं मणुस्स महिवासं।
सिद्धक्खेत्तं मज्झडवेहं कमहीण बेहुलियं। ५५७
उत्ताण ट्ठियमंते पत्तं व तणु तदवरि तणु वादे
अट्ठगुणड्ढाः सिद्धा तिष्ठिन्ति अणंत सुहतित्ता। ५५८

इसकी टीका में उत्तान छत्र का उत्तान स्थित पात्र या चषक के समान ऐसा अर्थ किया है। इसकें मध्य में रजत छत्राकार सिद्धक्षेत्र स्थित है।

कहां है यहां सिद्धशिला का नाम ?

इसी प्रकार तिलोयपण्णत्ति ८/६५७ में–

उत्ताण धवल दत्तोवसाणं संठाण सुदरं एदं।
पंचात्तालं जोयण लक्खाणि वाससंजुत्तं।

यह क्षेत्र (न कि शिला) ४५ लाख योजन प्रमाण उत्तान धवल छत्र के सदृश है और सुंदर है।

हरिवंश पुराण ६/१२८ में–

सोत्तनित महावृत श्वेत छत्रोपमाकृति

विशाल गोल सफेद उत्तनित छत्र की आकृति की आठवीं पृथ्वी है– कहां है यहां शिला ?

सिद्धान्तसार दीपक १६/४ व प्रतिक्रमण ग्रंथत्रयी पृष्ठ २८ में अवश्य ही ईषत्प्राग्भार (आठवीं भूमि) में बीच में मोक्ष शिला होना बताया गया है। कहां है यहां भी सिद्ध शिला का नाम?

जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश भाग ३ पृ. ३२३–३२४ पर सिद्ध लोक का वर्णन है न कि सिद्ध शिला का। इस सिद्धक्षेत्र के सिलसिले में क्षपणासार गाथा २५८ व जयधवला पु. १६ पृ. १६३ दोनों में भी सिद्ध शिला का नाम नहीं है। ईषत् प्राग्भार वसुधा का वर्णन है।

भगवान वृषभदेव के निर्वाण के बारे में आदिपुराण ४७/३४१ लिखता है–

शरीर त्रितयापाये प्राप्य सिद्धत्व पर्ययम्

निजाष्टगुण सम्पूर्णः क्षणाप्त तनुवातकः।

तीनों शरीरों के नाश होने से सिद्धत्व पर्याप्त प्राप्त कर वे निज के आठ गुणों से युक्त हो क्षण भर में ही तनुवातवलय में जा पहुंचे।

मल्लिनाथ के निर्वाण का वर्णन उतर पुराण ६६/६२ में यों है–

फाल्गुणो ज्जवल पंचम्यां तनुवातं समाश्रयत्

फाल्गुन सुदी पंचमी के दिन तनुवात (वलय) में स्थान ग्रहण कर लिया। यहां भी सिद्ध शिला का जिक्र नहीं है।

३. तिलोयपण्णत्ति ८/६५७, त्रिलोकसार गाथा ५५७ में 'शिला' का प्रयोग नहीं है, 'क्षेत्र' का प्रयोग है। यह भ्रम शायद इसलिए पैदा हुआ है कि तीर्थंकर का जन्माभिषेक, दीक्षा व ज्ञान आदि कल्याणक बहुधा शिलाओं पर ही हुए हैं।

४. सिद्धक्षेत्र तो मध्य लोक में अनेक हैं। कई तीर्थस्थल सिद्धक्षेत्र कहे जाते हैं, पर स्वर्गों के अंतिम छोर के बाद कोई सिद्ध लोक स्थित है जहां आत्माएं निवास करती हैं। यह तीन लोक के अग्रभाग में वर्तुलाकार ४५ लाख योजन लम्बा व १२ योजन चौड़ा बताया जाता है (वीर वर्धमान चरित ११/१०६)। इस सिद्धलोक/सिद्धक्षेत्र के विषय में तिलोयपण्णत्ति में बताया है कि यह आठवीं पृथ्वी धनोदधिवात, घनवात और तनुवात इन तीन वायुओं से युक्त है। इसके मध्य भाग में चांदी व सुवर्ण के सदृश और नाना रत्नों से परिपूर्ण ईषत्प्राग्भार क्षेत्र है।

तिलोयपण्णत्ति (९/३) के अनुसार पृथ्वी के ऊपर ७०५० धनुष जाकर सिद्धों का आवास है। यहां पर–

जावद्दं गदव्वं तावं गंतूण लोय सिहरम्मि

चेट्ठंति सव्व सिद्धा पुह पुह गयसित्थमूसगब्भणिहा। ९–१४

जितना जाने योग्य है उतना जाकर लोक शिखर पर सब सिद्ध पृथक्–पृथक् मोम से रहित मूषक के अभ्यन्तर आकाश के (याने चूहे के पेट के) सदृश स्थित हो जाते हैं।

(चूहे से तुलना करना कुछ अजीब तो लग रहा है।)

इस सबका सार यह जान पड़ता है कि तनुवात वलय के मध्यभाग में नाना रत्नों से परिपूर्ण ईषत्प्राग्भार है जिसे आठवीं पृथ्वी कहते हैं। इसके ऊपर ७०५० धनुष जाकर सिद्धों का आवास है जहां से आगे धर्म द्रव्य का अभाव है। इस लोक का आकार करणानुयोग के ग्रंथ कहते हैं। धवल रंग वाला उत्तान छत्र या उत्तान चषक जैसा है जिसका अर्थ ब्र. अशोक जी ने सही किया है। क्या वह शिला सीधी कटोरी की तरह है या उल्टी कटोरी की तरह? उत्तान का अर्थ 'उर्ध्वमुख' है। जो ऐसा **U** होगा न कि **∩** ऐसा याने छत्र उल्टा कटोरी सीधी। यदि उसका रंग धवल है तो फिर चंदन केसर से उसकी आकृति बनाना भी समुचित नहीं है।

५. चूंकि सर्व कर्म बंधन मुक्त शुद्ध आत्माओं के भी दो बंधन हैं– १. वे केवल उर्ध्वगामी ही हो सकती है और २. वहीं तक जाकर सदा के लिए रुकी रहती है जहां तक धर्म द्रव्य है। अतः मौजूदा प्रतीक में परिवर्तन ही करना है, तो मेरे हिसाब से इस जगह की सही अवधारणा यों की जानी चाहिए–

४५ लाख योजन

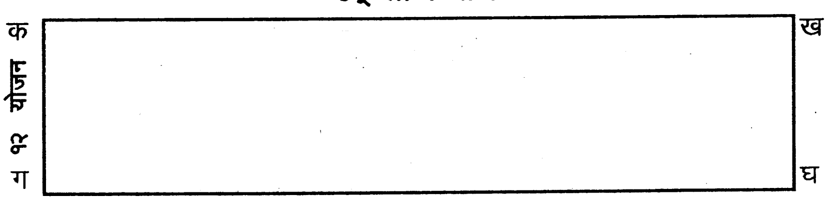

गघ वह पंक्ति है जो स्वर्गों का अंतिम छोर है और क ख वह पंक्ति है जिसके आगे धर्म द्रव्य नहीं है; अतः सिद्ध लोक उक्त कखगघ एक मंजूषा जैसा है। कख व गघ की लम्बाई ४५ लाख योजन व कग व खघ की ऊंचाई/चौड़ाई १२ योजन है इसी क्षेत्र को सिद्धालय, मुक्ति धाम, अष्टम वसुधा और शिवपुर विश्राम आदि भी कहते हैं। सिद्धों की पूजाओं में भी सिद्ध शिला का जिक्र नहीं है। इस मोक्ष स्थान का नाम सिद्धशिला कब और क्यों चल पड़ा यह विचारणीय है।

इस सिद्ध लोक के बीच में भगवान ऋषभदेव के ५०० धनुष लम्बाई वाले आत्म प्रदेश विराजमान होने चाहिए। पुराणों के अनुसार मानव की यही ज्ञात सबसे अधिक ऊंचाई है और उसके आस पास ही उन आत्माओं के प्रदेश होने चाहिएं जो सबसे पहले मुक्तिधाम पहुंची। उसके बाद 'एक में एक समाय' के अनुसार इसी क्षेत्र में असंख्य आत्माएं समाकर अनंत आनन्द का अनुभव कर रही हैं। यदि ऐसा तसव्वुर न किया जाए, तो फिर यह मानना पड़ जाएगा कि वे असंख्य सिद्ध आत्माएं जगह के लिए आपस में कशमकश कर रही हैं।

६. चूंकि कखगघ जगह सीमाओं से बंधी है इसलिए आत्माएं वहां पर अनंत शायद नहीं कही जा सकती। हां, अनगिनत अवश्य हैं। हालांकि यह भी सही है कि सिद्ध आत्माओं का यहां आना अनादि है, अनंत काल तक यह क्रम चलता भी रहेगा।

बैनाड़ा जी का एक तर्क यह भी है कि अर्द्धचंद्राकार शिला पर कोई बैठ नहीं सकता। किन्तु मोक्ष स्थान में बैठने, खड़े होने का सवाल ही कहां पैदा होता है।

७. तो पहली बात तो यह कि सिद्धक्षेत्र में कोई सिद्ध शिला नाम की शिला नहीं है। सिद्धलोक के लिए शब्द सिद्ध शिला का प्रयोग भ्रम पैदा करता है तथा शास्त्र विपरीत है और बंद होना चाहिए।

८. दूसरी बात है उत्तान शब्द के अर्थ को लेकर। प्राकृत शब्द कोश महार्णव में उत्तान का अर्थ उर्ध्वमुख है जिससे नतीजा निकलेगा कि उल्टा छत्र अथवा सीधी कटोरी–सीधा छत्र व उल्टी कटोरी उर्ध्वमुख नहीं होते।

९. फिर भी प्रतीक तो प्रतीक है। पूजा में भावों का महत्त्व है न कि प्रतीकों का। जिस तरह, तरह–तरह की मूर्तियों को साक्षात् भगवान मानकर पूजा–याचना की जाती है, वैसे ही प्रचलित प्रतीक को सही मानकर पूजा करने में मूल शास्त्रों का कोई उल्लंघन नहीं है, अतः मेरा ख्याल है कि इस प्रकार की बहस ही व्यर्थ है, लक्ष्य से डिगाने वाली है। शायद यही कारण है कि उमा (स्वाति) व वट्टकेर ने सिद्ध लोक के क्षेत्रफल आकार आदि का कोई जिक्र नहीं किया। ऐसी सूरत में स्वर्ग मोक्ष के बारे में श्री सुखमालचंद जी ने जो विवेचन शोधादर्श ३४/५६–६३ पृ. (व ३८/१६०–१६१) पर किया है वह बड़ा ही समुचित ठहरता है। मूलाचार ७/४४ में वर्णित लोक के नौ भेदों में से एक भाव लोक है याने रागद्वेष भावों के उदय को ही भाव लोक कहते हैं। मुक्ति हो जाने पर (भक्तों के अलावा) किस सिद्ध आत्मा को फिक्र है कि उसके अनंत कालीन निवास का क्षेत्रफल कितना है और उसका आकार–प्रकार कैसा है। कई बातों में कुछ नवीन करने की इच्छा से बेहतर है कि पुरातन परम्परा व प्रतीक को ही चलते रहने दिया जाए। ऐसा न हो कि कहीं भक्तजन बिना माकूल वजह सीधा छत्र या सीधी कटोरी में उलझकर दो नए पंथों में बंट जाएं।

–२१५, मन्दाकिनी एन्क्लेव,
अलकनन्दा, नई दिल्ली–११० ०१९

□□□

जिनवाणी

● **सेणो हस्से णो दीहे** — **- आचारांङ्ग १-६**

(आत्मा तो न छोटा है, न बड़ा है, न ऊंचा है न नीचा, उसका कोई वर्ण नहीं, कोई जाति नहीं।)

चिन्तन कण

धर्म का विकृत रूप

विद्वद्वर्ग और त्यागीवर्ग ज्ञान और धर्म पर अधिकार का दावा रखते हैं। त्यागी वर्ग 'श्री १०८ मुनि' के बजाय, राष्ट्रसंत, विशेषण से अपना नाम प्रारंभ करता है। फिर चारित्र चक्रवर्ती संत शिरोमणि/सम्यक् चारित्र के तेरह भेदों के स्थान पर उसने आवश्यक और आहारादिक (केशलोंच, नग्नता, भूमिशयन, अदन्तधोवन, आदि) शारीरिक क्रियाओं को मूलगुणों का महत्व दे दिया है। सभ्य संसार इन असभ्य क्रियाओं का रहस्य न समझकर इनको असामाजिक-अस्वस्थ मानता है। अपूर्णता के साथ अहंकार की हठवादिता विवेक को जागने ही नहीं देती। यह हमारी भक्तगणों की धर्मशून्यता नहीं है किन्तु हमें भी तो इन प्रारोपित मूलगुणों में शंका है। जिसका समाधान त्यागी वर्ग को करना चाहिये। इनसे प्राप्त उपलब्धियों का चमत्कार प्रगट करना चाहिये।

जैन मिलन के सदस्य वीर-अतिवीर-महावीर कुछ भी कहें। यह दुनिया पागलखाना है। इसमें नाना प्रकार की विडम्बनायें सदा से हो रही हैं, नयी नयी होती ही रहेंगी।

जैन शासन से यही गलती रही कि निरपेक्ष बन्धु वर्द्धमान स्वामी के शासन में खण्डन-मण्डन से आलम्बन प्राप्त ब्राह्मण आचार्यों ने इसे जटिल और विवादास्पद बना दिया। अन्यथा इसे केवल तत्त्व प्रतिपादन से सीमित रखते तो जैन समाज के भी भेद-उपभेद शायद न होने पाते।

कहाँ अपेक्षा का प्रयोग उचित है और कहाँ उपेक्षा का- इसमें भी विवेक की आवश्यकता है। जैन समाज में उल्टा व्यवहार हो रहा है और सब गुड़ का गोबर चिरकाल से हो रहा है। कर्तव्य के प्रति उपेक्षा का प्रयोग हो रहा है और संयोगों से अपेक्षा की जाती है।

- सुखमाल चन्द जैन

F 3 , ग्रीन पार्क (मेन), नई दिल्ली -१६

मोक्ष नरक - क्या और कहाँ

इन्द्रियां जीव को ज्ञान करने की साधन हैं। जीव को सुख-दुख की अनुभूति इन्द्रियों से होती है। यदि इन्द्रियां न हों तो जीव को अनुभूति ज्ञान न होगा। अनुभूति ज्ञान के अभाव में सुख-दुख की अनुभूति न होगी। जिस जीव के जैसी जितनी इन्द्रियां होती हैं, वह जीव अपनी इन्द्रियों से वैसी उतनी सुख-दुख की अनुभूति कर पाता है। मानव पर्याय के जीव

में पांच इन्द्रिय के होने के साथ भेद ज्ञान करने की शक्ति होने से मानव नाना प्रकार के संकल्प/विकल्प कर अन्य पर्याय के जीवों से अधिक दुखों से भरा होता है। मानव भेद ज्ञान होने के अहंकार में अविवेकी हो अन्य पर्यायों के जीवों को अपने से हीन, अज्ञानी दुखी मानता है। मानव को ज्ञान ही नहीं कि जिस जीव के जितनी कम इन्द्रियां होंगी वह उतना ही कम दुखों की अनुभूति करेगा। मानव पर्याय ही नरक पर्याय कही जाती है। नर से ही शब्द नरक बना है। एक इन्द्रिय जीव में केवल एक इन्द्रिय होने से विकल्प के अभाव में सुख-दुख का बोध नहीं होता है। सुख दुख के भेद ज्ञान होने को दो चाहिये। दूसरे के अभाव में अकेला होने से जीव में क्रिया नहीं होती है। जिससे एक इन्द्रिय जीव क्रिया करने में मुक्त हो मोक्ष पर्याय वाला हो जाता है। (देखिये समयसार गाथा २६२।) नरक और मोक्ष जीव की पर्यायें हैं स्थान नहीं। जहां जीव जाता हो। किन्तु इस तथ्य का शास्त्रकारों को ज्ञान न होने से उन्होंने नरक-मोक्ष को स्थान मान करोड़ों जीवों को नरक-मोक्ष जाने का कथन किया है। किन्तु नरक-मोक्ष कहां है इसका पता नहीं। मुनि वर्ग विवेकहीन हो शास्त्रों का अनुसरण कर अपने साथ श्रावकों को भी अज्ञानी बना रहे हैं। उन्हें ध्यान में रखना होगा कि जिसका प्रत्यक्षीकरण नहीं किया जा सकता हैं वह दर्शन नहीं, कल्पना है और कल्पना को जैन दर्शन में स्थान नहीं। आग्रह है कि उपरोक्त के अनुसार जगत में होता हुआ शास्त्र मोह से मुक्त हो स्वयं देखनें-जानने का। इसे सभी की आलोचना का विषय बनायें। यही आपसे जैन दर्शन अपेक्षा करता है।

– धन्य कुमार जैन (पूर्व विधायक)
सिहोरा (जबलपुर)

❑❑❑

जिनवाणी

धम्मो वत्थु सहावो, खमादि भावो य दस विहो धम्मो।
रयणतयं च धम्मो, जीवाण रक्खणं धम्मो।।

(वस्तु के स्वभाव को ही धर्म कहते हैं। दस आत्मिक गुणों अर्थात् क्षमा आदि को दशलक्षण धर्म कहते हैं। रत्नत्रय अर्थात् सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान व सम्यक् चारित्र धर्म के अंग हैं। प्राणी मात्र की रक्षा करना भी धर्म है।)

स्मृतियों में हो बने

६ फरवरी को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में इतिहास-मनीषी, विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की ८६वीं जन्म जयन्ती पर गोष्ठी और काव्य-संध्या का आयोजन हुआ। कार्यक्रम के अध्यक्ष 'शोधादर्श' के प्रधान सम्पादक वयोवृद्ध विद्वान श्री अजित प्रसाद जैन और मुख्य अतिथि नगर के लब्धप्रतिष्ठ वयोवृद्ध कवि श्री गयाप्रसाद तिवारी 'मानस' थे। इसका संचालन श्री रमाकान्त जैन ने किया। वाग्देवी सरस्वती की मूर्ति एवं श्रद्धेय डाक्टर साहब के चित्र पर माल्यार्पण, दीप-प्रज्वलन और डाक्टर साहब द्वारा रचित -'वीतराग स्वरूपम्' एवं 'जय महावीर नमो' के समवेत गायन से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। अपने प्रास्ताविक उद्बोधन में डॉ. शशिकान्त ने सभी समागत का स्वागत करते हुए आयोजन की प्रासंगिकता तथा डाक्टर साहब द्वारा भारतीय इतिहास एवं वाङ्मय के क्षेत्र में किये गये अवदान पर प्रकाश डाला। श्री नरेशचन्द्र जैन, श्री सूर्यकान्त, डॉ. ओमप्रकाश त्रिवेदी एवं श्री अजित प्रसाद जैन ने डाक्टर साहब से सम्बंधित अपने संस्मरण व उद्गार व्यक्त करते हुए उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। श्री विष्णुदत्त शर्मा और श्री रमाकान्त जैन ने अपनी काव्यांजलि अर्पित की-

'जन्मदिन है आज तुम्हारा, स्मृतियों में हो बने।
अर्पित हैं श्रद्धा-सुमन, यश, तुम्हारा चन्दन बने।।'

चार वर्षीया नन्हीं पलक ने अपनी बाल कविताओं से काव्य-संध्या को मुखरित किया और उसे गति दी श्री दिनेशचन्द्र अवस्थी, डॉ. पद्माकर द्विवेदी, श्री विष्णुदत्त शर्मा, श्री रवि अवस्थी, डॉ. सुभाषचन्द्र 'गुरुदेव', श्री लक्ष्मीचन्द्र यादव, श्री अनिल बांके, श्री आदित्य चतुर्वेदी, श्री रमाकान्त जैन, डॉ. शशिकान्त तथा श्री गया प्रसाद तिवारी 'मानस' के प्रातिभ स्वरों ने जिनसे उद्भूत हास्य-व्यंग्य और सरस गीतों ने वातावरण रस-सिक्त किया।

डॉ. शशिकान्त तथा सभी उपस्थित वृन्द ने इस अवसर पर 'शोधादर्श' के सह-सम्पादक श्री रमाकान्त जैन का वरिष्ठ नागरिकों की कोटि में सम्मिलित हो जाने हेतु अभिनन्दन भी किया।

- अंशु जैन 'अमर'

❑❑❑

क्षणिकाएं

- रमा कान्त जैन

शिथिलता पर चोट करने वाले
यहाँ हों चाहे ही कितने।
चिकने घड़े हम हैं इतने
गिनते नहीं, जूते पड़े कितने।।

◆◆◆

कौन कहता है शास्त्रों की
आज उपेक्षा हो रही है ?
अरे भाई, अब तो जिनवाणी
बस निजवाणी हो रही है।।

◆◆◆

दानवीर भी यहाँ क्या खूब होते हैं भाई।
दान देने के पूर्व मौक्तिकमाला गले में पाई।।

◆◆◆

नेता आश्वासन देने में पक्का होता है।
पर वचन निभाने में कच्चा होता है।।

◆◆◆

वचन देने में भले ही कृपणता निभाइये आप।
पर दिया वचन निभा, प्रतिष्ठा अपनी बचाइये आप।।

◆◆◆

उनकी छींक भी अखबारों में छप जात।
हमारी मौत भी उन्हें नज़र नहीं आत।।

◆◆◆

खुला विश्वविद्यालय है यहाँ
आप भी लाभ उठाइये।
अर्हता की कहाँ आवश्यकता,
दक्षिणा दे, डिग्री पाइये।।

◆◆◆

वीतराग के उपासक बन हम
वीतराग भाव जीवन में अपनाते
किसी को सम्मानित हुआ देख
खुशी हम नहीं हैं मनाते।
ना किसी की विदाई पर
नयनों को नम कर पाते।
हम तो बस यहाँ पर
मित्रता, लगन, नम्रता नारा लगाते।।

❑❑❑

जिनवाणी

मित्ती मे सव्व भुएसु, वैरं मज्झं न केणई।

– आचारांग सूत्र

(जगत के सब प्राणी मेरे मित्र हैं, किसी के साथ मेरा वैर नहीं है।)

अप्पा हु खलु सययंरक्खियव्वो।

– दश वै० चूर्णि २१६

(अपनी इन्द्रियों और भावनाओं पर सदा नियन्त्रण रखना चाहिए।)

समाचार विमर्श

धर्म संसद में गणिनी आर्यिका ज्ञानमती जी–

'महाकुंभ नगर, प्रयाग– विश्व हिंदू परिषद द्वारा महाकुंभ के अवसर पर आयोजित धर्म संसद में प्रथम बार शीर्षस्थ धर्माचार्यों के बीच बोलते हुए गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने २० जनवरी को 'अहिंसा ही परम ब्रह्म है' विषय पर अपना उद्‌बोधन प्रदान किया और जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव व उनकी तपस्या स्थली प्रयाग के संबंध में विस्तृत प्रकाश डालते हुए विश्व में अहिंसा का स्वर गुंजायमान किए जाने का आह्वान किया।'

(जैन गजट, १ फरवरी)

पूज्य आर्यिका जी शास्त्र मर्मज्ञ एवं प्रभावक साध्वी हैं। पिछले कुछ वर्षों से उन्होंने भारतीय संस्कृति के प्रथम इतिहास पुरुष आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की प्राचीनता एवं मानव सभ्यता को उनके महान अवदान के विषय में जैनेतर समाज में सही जानकारी न होने से व्याप्त भ्रांतियों का निराकरण ही मानो अपना मिशन बना लिया है। इस ध्येय की पूर्ति हेतु उन्होंने ऋषभ निर्वाण तिथि दि. २३ जनवरी २००१ ई० को समाप्त हुए गत वर्ष को भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष के रूप में मनाए जाने की प्रेरणा दी थी जिसके अन्तर्गत विद्वत्‌जनों की १००८ संगोष्ठियां भी आयोजित की जा रही हैं। भगवान ऋषभदेव की तपस्थली रहे प्रयाग को एक भव्य जैन तीर्थक्षेत्र के रूप में विकसित करने का कार्य तथा भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर पर्यन्त सभी तीर्थंकरों द्वारा प्रणीत अहिंसा पर धर्म संसद में उनका उद्‌बोधन भी उसी की कड़ी में है।

पूज्य आर्यिका जी के इस उद्‌बोधन के प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि इसी धर्म संसद को मुख्य अतिथि पद से संबोधित करते हुए जगद्‌गुरु शंकराचार्य स्वामी वासुदेवानन्द ने कहा कि 'हिमालय हमारा सर्वोच्च स्थान है, भगवान शंकराचार्य ने उसे धाम का नाम दिया, वह भगवत् धाम है, लेकिन कुछ षडयंत्रकारियों ने जैन धर्म को बदनाम करने के लिए वहां जैन मंदिर बनाने की तैयारियां शुरू कर दीं। धाम की पवित्रता बरकरार रहनी चाहिए, वहां बदरी विशाल का मंदिर रहना चाहिए- -।' हिन्दू धर्म के इन जगद्‌गुरु कहलाने वाले तथाकथित महान् संत की दृष्टि में जैन धर्मावलंबी यदि बदरीनाथ धाम में (जो आचार्य विद्यानंद मुनि जी के अनुसार ऋषभदेव व उनके माता-पिता नाभिराय व मरुदेवी की तपस्थली है) या सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र में (जिसमें कैलाश पर्वत भी है जहाँ से आदि तीर्थंकर ने मोक्ष गमन किया था) कहीं भी जैन धर्मानुयायी अपनी न्यायपूर्वक खरीदी गई भूमि

पर जैन मंदिर का निर्माण करें तो वे षडयंत्रकारी हैं जो जैन धर्म को बदनाम करने के लिए जैन मंदिर के निर्माण का उपक्रम करने की धृष्टता करते हैं। क्या जगद्गुरु जी तथा उनकी जैसी मानसिकता के संत इसी प्रकार यह भी फतवा जारी करने का साहस रखते हैं कि जो हिन्दू धर्मावलंबी हिमालय क्षेत्र (जो उनका धाम है) को छोड़कर देश भर में अन्यत्र न केवल अधिकृत वरन् अनधिकृत सार्वजनिक भूमि (जैसे पार्क, सड़कों के चौराहों आदि) पर हिन्दू मंदिरों (भगवान राम, कृष्ण, शिव अन्य हिन्दू देवी-देवताओं के मंदिरों) का निर्माण करते आ रहे हैं वे सब षडयंत्रकारी हैं और उनके ऐसे कृत्य से हिन्दू धर्म बदनाम होता है ?

इन संत जी के परम गुरू आदि शंकराचार्य को जन्म लिए तो कुछ सौ वर्ष ही हुए हैं जबकि भगवान ऋषभदेव को जन्मे तथा हिमालय में तपस्या करके निर्वाण लाभ किए तो सहस्रों-सहस्रों वर्ष हो गए हैं। इन संत जी के आदिगुरु जी ने हिमालय को धाम घोषित कर दिया तो क्या सारा हिमालय क्षेत्र अन्य धर्मावलंबियों के लिए प्रतिबंधित क्षेत्र स्वयमेव हो गया ?

इन श्री शंकराचार्य वासुदेवानन्द जी से हम यह स्पष्ट कराना चाहेंगे कि बदरीनाथ में यदि भगवान ऋषभदेव की परम वीतरागी व शांति की प्रतिकृति प्रतिमा जैन धर्मावलंबियों के अपने परिसर में स्थापित हो जाय तो भगवान बद्री विशाल की प्रतिमा व मंदिर कहां चले जाएंगे या उनकी प्रतिष्ठा में किस प्रकार कमी आ जाएगी। वैदिक-सनातन धर्म के महान ऋषि महर्षि व्यास ने हिन्दू धर्म के सर्वमान्य धर्म ग्रंथ श्रीमद् भागवत पुराण में भगवान ऋषभदेव को भगवान विष्णु का प्रथम मानव पुरुष अवतार घोषित किया है।

क्या शंकराचार्य जी का उपरोक्त वक्तव्य महर्षि व्यास तथा श्रीमद्भागवत की अवमानना नहीं है ? इसके पूर्व बद्रीनाथ धाम के पंडे, पुजारियों, महन्तों सहित एक अन्य शंकराचार्य (स्वामी माधवाश्रम) भी इसी मानसिकता से बद्रीनाथ नगर में भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा प्रतिष्ठित किए जाने के उपक्रम का उग्र विरोध कर चुके हैं जिसकी समीक्षा हम शोधादर्श -४२ के अपने सम्पादकीय लेख में कर चुके हैं।

हमें हिन्दू धर्म की उदारता, सहिष्णुता व सह-अस्तित्व की भावना में कोई संदेह नही है पर उनके शीर्ष संतों के ऐसे वक्तव्यों से अल्प संख्यक जैनियों की धार्मिक भावनाएं तो आहत होंगी ही। हमें यह देख कर दुःख हुआ कि जैन धर्म की सर्वोच्च साध्वी कहलाने वाली आर्यिका जी ने इन शंकराचार्यों तथा उनकी जैसी मानसिकता वाले अन्य हिन्दू संतों की भगवान ऋषभदेव के संबंध में विकृत भ्रांतियों का निवारण करने तथा उनके वक्तव्यों का सशक्त प्रतिवाद करना उचित नहीं समझा या साहस नहीं किया।

एक और नई भट्टारक पीठ का सृजन—

कर्नाटक के जिला धारवाड़ में धारवाड़ से १५ कि.मी. दूर अम्मिनभावी कस्बे में युवाचार्य गुणधरनंदी जी की प्रेरणा से एवं उनके ससंघ सान्निध्य में नूतन भट्टारक पीठ की स्थापना ११ फरवरी, २००१ को की गई तथा श्री धर्मभूषण भट्टारक पीठासीन किए गए।

स्थापना महोत्सव में स्वस्तिश्री भट्टारक लक्ष्मीसेन कोल्हापुर, सिहन्नतगड्डी, मूड़बिद्री, कनकगिरि व कारकल के भट्टारकगण, प्रसिद्ध तांत्रिक जगदाचार्य श्री चन्द्रास्वामी ने भी अपना सान्निध्य प्रदान किया। अम्मिनभावी को अतिशय क्षेत्र की संज्ञा प्रदान की गई।

(जिनदास, २८ फरवरी, २००१)

उपरोक्त समाचार से यह स्पष्ट नहीं होता कि क्या अम्मिनभावी में कोई प्राचीन दर्शनीय जिनमंदिर है या केवल भट्टारक पीठ स्थापित करने के लिए इसे अतिशय क्षेत्र घोषित किया गया है, क्या नूतन भट्टारक श्री धर्मभूषण जी आचार्य गुणधर नंदी जी के ही शिष्य हैं या किन्हीं भट्टारक स्वामी जी के। वैसे अब हमारे कतिपय दिगम्बर आचार्य, आर्यिकाएं नई भट्टारक पीठों की स्थापना का समर्थन अनुमोदन करने लगे हैं।

– अजित प्रसाद जैन

□□□

सज्झाए वं निउत्तेण सव्व दुक्खं विमोक्खये।

– उत्त : २६/१०

(स्वाध्याय करते रहने से समस्त दुखों से मुक्ति प्राप्त होती है।)

♦♦♦♦♦♦

चउण्वीसत्यएणं दंसण विसेहि जणयइ।

– उत्त० २६/६

(चतुर्विंशति स्तव से सम्यक्त्व की विशुद्धि प्राप्त होती है।)

□□□

प्रलयंकारी भूकम्प-

२६ जनवरी के प्रातः जब पूरा देश हर्षोल्लास के साथ राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक गणतंत्र दिवस मनाना प्रारंभ कर रहा था तथा गणतंत्र दिवस की परेड प्रारंभ हो रही थी, ८.४६ पर आए भयंकर भूकम्प ने डेढ़ मिनट में जो कहर ढा दिया उसको शब्दों में अंकित करना संभव नहीं है। अहमदाबाद, सुरेन्द्रनगर, गांधीधाम तथा सविशेष कच्छ, भुज, अंजार, भचाऊ, रतनाल आदि नगरों और कस्बों में, छोटे-छोटे गांवों में भूकम्प से हुई प्रलयंकारी विनाश लीला रोंगटे खड़े करने वाली है। अनेक बस्तियां पूरी की पूरी मलबे के ढेर में बदल गईं और एक भी आदमी जीवित नहीं बचा। गगनचुम्बी बहुमंजिली इमारतें देखते ही देखते ध्वस्त हो गईं या उनमें दरारें पड़ गईं, जमीन फट गई, सड़कों में चौड़ी दरारें पड़ गईं। अकेले कच्छ क्षेत्र में ही ५०,००० से अधिक की तथा पूरे गुजरात में एक लाख से अधिक की जनहानि हुई बताई जाती है। घायलों की संख्या भी लाखों में है। धन सम्पत्ति की हानि रु. ३०,००० करोड़ से अधिक की आंकी गई है।

पूरे गुजरात में, सविशेष कच्छ में, जैन समाज का बाहुल्य रहा है अतः जनधन हानि भी जैनों की भारी हुई है। भुज नगर तो जैन श्रेष्ठियों के कारण करोड़पतियों का नगर ही कहलाता था। वहां आज मलवे का ढेर रह गया है। इस डेढ़ मिनट की विनाश लीला में अनेक करोड़पति रोडपति हो गए। अनेक भव्य जैन मंदिर व उपाश्रय नष्ट हो गए। विश्व बैंक और एशिया विकास बैंक की सर्वेक्षण टीमों ने भूकम्प से तहस-नहस हुए गुजरात में ध्वस्त हुई इमारतों के पुनर्निर्माण के लिए रु. १०,६०० करोड़ के संसाधन जुटाने की आवश्यकता बताई है।

इस विनाश लीला में कुछ चमत्कार भी देखने में आए। भचाउ में एक उपाश्रय के मलबे से ३५ साध्वियों को ५२ घंटों के सतत् प्रयास के बाद जीवित निकाला गया।

कहा जाता है कि पिछले १५० वर्षों में भूकम्प से हुई विनाश लीलाओं में यह सर्वाधिक भयंकर त्रासदी है। भारत सरकार ने इसे राष्ट्रीय त्रासदी घोषित किया है तथा पूरा देश तथा अनेक समाजसेवी संस्थाएं तन-मन-धन से भूकम्प पीड़ितों की सहायता एवं पुनर्वास के कार्य में जुट गये है। केन्द्र सरकार व विभिन्न प्रदेशों की राज्य सरकारें तो अपना आर्थिक योगदान कर ही रही हैं, पाकिस्तान सहित कई अन्य देशों से भी सहायता प्राप्त हुई है। जैन समाज भी राहत कार्य में किसी से पीछे नहीं रहा है तथा सभी बढ़ चढ़ कर अपना योगदान कर रहे हैं फिर भी यह सब आवश्यकता से कम ही है।

वासनी मंडी में जिन मंदिर की प्रतिष्ठा सम्पन्न होने के पश्चात आचार्य भगवन्त श्रीमद् विजय नित्यानंद सुरीश्वर जी के सानिध्य में आयोजित धर्मसभा में आचार्य श्री, भूकम्प की

इस भयंकर त्रासदी के प्रति जन-जन को उनका कर्तव्य बोध कराते हुए, अत्यन्त द्रवित हो गए तथा उन्होंने इस प्राकृतिक आपदा के शिकार हुए लाखों लोगों के सहायतार्थ अपनी चादर ही फैला दी। देखते ही देखते बोझा उठाने वाले मजदूर से लेकर सेठ साहूकारों ने इस दान यज्ञ में दिल खोलकर अपनी सम्पति अर्पित कर मानव धर्म के प्रति अपना दायित्व निभाया तथा मात्र १५ मिनट में लगभग छ लाख की राशि, कपड़े, बर्तन तथा अन्य आवश्यक सामग्री तथा सोने चांदी के आभूषण एकत्रित हो गए। (श्वे. जैन २४ फरवरी)

इसी प्रकार टांडा नगर (जिल धार) में आचार्य श्री विजय जयंतसेन सूरीश्वर जी के १८वें पाटे महोत्सव के सुअवसर पर आचार्य श्री की प्रेरणा से श्री संघ ने १८ लाख रु. की सहायता की घोषणा की।

श्री कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र पर आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में दि. २१ से २७ फरवरी तक विशाल पंचकल्याणक, त्रयगजरथ तथा बड़े बाबा का महामस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न हुआ। डॉ. शेखरचंद जैन के शब्दों में 'अपार जन सैलाब, १७४ पिच्छी (मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक), विद्वत् परिषद के ६० विद्वान और लाखों श्रावक, मंच पर विराजमान आचार्य व उनका संघ-लगता था कि साक्षात समवशरण में हम बैठे हैं, (तीर्थंकर वाणी, मार्च)। एक प्रत्यक्षदर्शी से भूकम्प से हुई विनाश लीला का विवरण सुनकर वीतरागी आचार्य श्री भी द्रवित हो गए। इससे प्रेरणा लेकर वहां एकत्रित श्रावक समुदाय ने भूकम्प पीड़ितों के सहायतार्थ एक राशि इकट्ठी की जिसे आचार्य श्री के शांति एवं संवेदना संदेश के साथ भेज दिया गया। (प्रकाशित समाचार में सहायता राशि के प्रमाण का उल्लेख नहीं किया गया है।)

गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी उस समय तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली पंचकल्याणक महोत्सव के प्रसंग से प्रयाग में विराजमान थीं, इस त्रासदी के समाचार को सुनकर माताजी ने तुरन्त महाशान्तिधारा करवाकर लगातार दस दिन तक विश्व शांति यज्ञ के रूप में ऋषभदेव विधान, शांति विधान, ऋषिमंडल विधान एवं पंच परमेष्ठी विधान सम्पन्न कराए। भविष्य में भूकम्प की त्रासदी से देश को मुक्त कराने हेतु भी माताजी ने तथ्य रूप में बताया कि प्रथम तो पूरे देश की जैन समाज अष्टान्हिका पर्व (२ मार्च से १० मार्च २००१) में स्थानीय मंदिरों में व्यापक स्तर पर इन्द्रध्वज विधान का आयोजन करे, प्रत्येक जगह सवा-सवा लाख जाप्य उसी मंत्र के हों तथा पूर्णाहुति, शांति यज्ञ हवन किए जायं। (-तीर्थंकर वाणी, मार्च २००१)

अनेक अन्य साधु-साध्वियों ने भी विश्वशांति यज्ञ के आयोजन करवाकर भूकम्प पीड़ित परिवारों के लिए शांति की कामना की।

हम सभी साधु संतों की भूकम्प पीड़ितों की त्रासदी से करुणार्द्र होकर शांति कामना करने की भावना का सम्मान करते हैं। किसी भी सत् पुरुष-महिला के पीड़ितों की दशा से द्रवित होकर उनकी शांति की मंगल कामना करना स्वाभाविक है, सज्जनता का परिचायक है।

भारत की इस धर्म प्राण धरा पर विभिन्न धर्मों के आचार्य, ऋषि, मुनि, साधु-संत तथा धर्मनिष्ठ गृहस्थ सदियों से अपनी-अपनी आस्थानुसार विश्व शांति यज्ञ करते आ रहे हैं, महाकुंभ में भी हुए, अन्यत्र सम्पन्न हुए धार्मिक आयोजनों में भी हुए। जैनियों की तो नैत्यिक पूजाएं ही शांतिपाठ के साथ ही समाप्त होती हैं जिसमें देश की, राष्ट्र की तथा समस्त प्रजा की सर्व मंगल कामना की जाती है।

परन्तु क्या इनसे प्राकृतिक आपदाओं में कभी कोई कमी आई? पूज्य आर्यिका जी ने अष्टान्हिका पर्व में स्वरचित इन्द्रध्वज विधान किए जाने की प्रेरणा दी है। दिगम्बर जैन समाज में सैकड़ों वर्षों से अष्टान्हिका पर्व में सिद्धचक्र विधान करने की परम्परा चली आ रही है। कदाचित् गणिनी आर्यिका जी अब उस परम्परा में परिवर्तन चाहती हैं।

आजकल जैन पत्र-पत्रिकाओं के पन्ने पूज्य मुनिराजों एवं आर्यिकाओं के सानिध्य में विशाल स्तर पर सम्पन्न हो रहे भव्य पंचकल्याणक महोत्सवों एवं पूजा विधानों के समाचारों से भरे रहते हैं। ऐसे दो विशाल महोत्सव हाल ही में कुण्डलपुर एवं प्रयाग में सम्पन्न हुए हैं जिनमें लाखों श्रद्धालुओं की भीड़ जुड़ी और करोड़ों का व्यय हुआ। साथ ही बचत भी कम नहीं हुई। हमारे दिगम्बर मुनिराजों व आर्यिका माताओं के पास चादर तो होती नहीं कि जिसे वे फैला सकते और श्रद्धालुजन आचार्य श्री/आर्यिका माता जी की करुणा से प्रेरणा लेकर आहत-मानवता की सहायतार्थ धन वर्षा कर देते। पर क्या ही अच्छा होता यदि हमारे ये पूज्य धर्म गुरु यह प्रेरणा देते कि पूरी बचत या उसका बहुभाग ही भूकम्प पीड़ितों के सहायतार्थ भेज दिया जाय।

इस राष्ट्रीय त्रासदी के परिप्रेक्ष्य में भगवान महावीर के २६००वें जन्म कल्याण महोत्सव वर्ष-अहिंसा वर्ष के सुअवसर पर उन करुणामूर्ति महामानव को विनयांजलि अर्पित करने का एक यह भी तो तरीका हो सकता है कि इस वर्ष हम अपने सभी धर्म महामहोत्सवों को पूरी धार्मिकता के साथ पर सादगी से मनाएं तथा इस प्रकार की गई सारी बचत इस त्रासदी की शिकार हुई मानवता की सहायतार्थ अर्पित कर दें। हमारे पूज्य धर्म गुरुजनों से प्रार्थना है कि वे भी अपने मंगल प्रवचनों में समाज को ऐसी प्रेरणा दें।

दस माह के पुत्र को दीक्षा हेतु अर्पण-

जैन शासन के इतिहास में उस समय एक नया और अनूठा अध्याय जुड़ गया जब आबू पर्वत की रघुनाथ धर्मशाला में खींचा दंपति ने अपने दस माह के पुत्र गौरव को जैन मुनियों संयम शिरोमणि श्री पार्श्वचन्द्र जी म.सा. एवं डॉ. श्री पदम मुनि जी म.सा. को समर्पित कर दिया।

समर्पित शिशु को समय पर दीक्षा प्रदान की जाएगी। संतों की आज्ञा से, संघ साक्षी में धार्मिक प्रवृत्ति वाली श्राविका उमराव बहन चोरडिया को बालक के लालन पालन की जिम्मेदारी सोंपी गई। इसी कार्यक्रम के दौरान बालक की माता मुमुक्षु आशा बहन ने भी दीक्षा ग्रहण की- - -(दैनिक भास्कर, राजस्थान)

(एक धार्मिक श्वेताम्बर जैन पत्रिका में मुमुक्षु आशा बहन के दीक्षा समारोह का समाचार बड़े विस्तार से प्रकाशित हुआ है। एक अन्य पत्रिका में बाल दीक्षा के समर्थन में भी लेख प्रकाशित हुए हैं। इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि खींचा दंपति के एक और पुत्र व पुत्री हैं पर वे प्रारंभ से ही नाना नानी के पास पल रहे हैं तथा शिशु के पिता श्री राजेश खींचा ने दीक्षा नहीं ली है और वे ग्रहस्थावस्था में ही बने रहेंगे।

यद्यपि प्रकाशित समाचारों से खींचा दम्पति की आर्थिक स्थिति संबंधी कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती, लगता यही है कि कदाचित् श्री राजेश खींचा की आर्थिक स्थिति दयनीय ही रही होगी और वे अपने छोटे से परिवार का भी संतोषपूर्वक पालन करने में समर्थ नहीं रहे होंगे तथा अभावजन्य ग्रहकलह से ऊब कर ही उनकी पत्नी ने दीक्षा ले ली तथा दोनों ने अपने शिशु को दीक्षार्थ अर्पित कर दिया। यदि श्री खींचा ने धर्म बुद्धि से ऐसा किया होता तो सर्वप्रथम वे दीक्षा लेते।

श्वेताम्बर आम्नाय में बाल दीक्षा की परम्परा रही है पर किसी नितान्त अबोध शिशु को जिसने अभी बोलना भी नहीं सीखा कठोर नियम संयम वाली जैन श्रमण दीक्षा के लिए माता पिता द्वारा अर्पित कर दिए जाने की घटना पहली बार ही सुनने में आई है। शिशु दीक्षा तो नहीं पर दीक्षित नवयुवा मुनियों का बाहुल्य तो हमें एक दिगम्बर जैनाचार्य के संघ में भी देखने में आया जो अभी शास्त्रज्ञान में परिपक्व तो क्या होते, अभी उन्हें भाषा समिति की मर्यादाओं को भी सीखना है। हम विस्मित थे कि इन नवयुवा संतों को अपने जीवन के प्रभातकाल में ही कौन सी दुखद परिस्थितियों का सामना करना पड़ा जिसके कारण उन्हें संसार से, परिवार के माया-मोह से, ग्रहस्थ जीवन से, और अपनी देह से इतनी विरक्ति हो गई कि उन्हें कठोर मुनि मार्ग भी आकर्षक लगने लगा। अथवा उन्होंने मुनि दीक्षा को अपने गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियों से, कर्म पुरुषार्थ से बचने, पलायन करने का एक

आवरण मात्र बनाया है। वंश वृद्धि की लालसा से ग्रहस्थ तो ग्रस्त हैं ही, साधु संत भी इससे मुक्त नहीं। जो जितनी दीक्षा प्रदान कर ले व उतना ही बड़ा आचार्य माना जाता है। पिछले पचास वर्षों में जैनों की श्रमण संख्या में अप्रत्याशित ढंग से वृद्धि हुई है। जिसमें एक बड़ी संख्या नवयुवा साधुओं, साध्वियों की है। श्रमण संस्था में शिथिलाचार भी उसी अनुपात में बढ़ा है। किसी अबोध शिशु को प्रारंभ से ही कर्म पुरुषार्थ से विरत रहने का प्रशिक्षण देना या किसी नवयुवा/युवती को गृहस्थाश्रम की जिम्मेदारियों से पलायन कर श्रमण दीक्षा लेने के लिए प्रेरित करना हमारी अल्पबुद्धि में उसके तथा समाज के प्रति अन्याय है।

- अजित प्रसाद जैन

❑❑❑

ज्योतिर्मय ज्योति प्रसाद

इतिहास-मनीषी ज्योतिर्मय
ज्योति प्रसाद हमारे।
तुम्हें प्रणाम सभी हम करते,
जैन परिवार दुलारे।।
वृन्दावन के पास रम रहे
शशिकान्त, रमा हैं प्यारे।
छायी बहार घर में उनके,
फलफूल रहे बच्चे प्यारे।।
भारत के इतिहास रचयिता
तथ्यपरक लिखते थे।
जैन धर्म में रहे प्रवीण,
सूत्र निराले लिखते थे।।

- श्री विष्णुदत्त शर्मा
३३, पानदरीबा, लखनऊ

❑❑❑

समाचार विविधा

गाजियाबाद में धर्म, आगम, विज्ञान विचार संगोष्ठी– श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कविनगर, गाजियाबाद में दिनांक १८ से २० सितम्बर को एक त्रिदिवसीय धर्म, आगम एवं विज्ञान विचार संगोष्ठी डॉ. श्रेयांस कुमार जैन एवं डॉ. नीलम जैन के संचालन में सम्पन्न हुई। संगोष्ठी में डॉ. जयकुमार जैन (मुजफ्फरनगर) ने अनर्थदण्ड व्रत की प्रासंगिकता; डॉ० अनुपम जैन (इन्दौर) ने 'जैनाचार्यों द्वारा प्रतिपादित गणित एवं आधुनिक गणित; डॉ. अशोक जैन (ग्वालियर) ने 'अभक्ष्य-भक्ष्य भोजन; डॉ. अनिल जैन (अहमदाबाद) ने 'क्लोनिंग और कर्म सिद्धान्त; डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' (बुरहानपुर) ने 'जैन पूजा पद्धति'; डॉ. कपूरचंद्र जैन (खतौली) ने 'जैन धर्म में पुद्‌गल द्रव्य'; डॉ. एम.एम. बजाज (दिल्ली) ने 'हिंसक पदार्थों का उपयोग एवं भूकम्प'; डॉ. श्रेयांस कुमार जैन (बड़ौत) ने 'सामायिक और ध्यान की प्रासंगिकता'; डॉ. नलिन के. शास्त्री (बोध गया) ने 'धर्म और विज्ञान'; तथा प्राचार्य श्री निहालचद जैन (बीना) ने 'शिक्षाव्रतों की सामयिक भूमिका' पर अपने आलेखों का वाचन किया और प्रबुद्ध श्रोताओं की जिज्ञासाओं का समाधान किया। इस अवसर पर अनेकान्त ज्ञान मंदिर, बीना ने हस्तलिखित ग्रन्थों की प्रदर्शनी भी लगायी।

शिमला में अखिल भारतीय प्राकृत–संगोष्ठी– २० और २१ अक्टूबर, २००० को राष्ट्रपति निवास, शिमला में राष्ट्रीय उच्चतर अध्ययन संस्थान द्वारा 'प्राकृत के मुक्तक काव्यों में प्रगीत परम्परा', विषय पर आयोजित एक द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी सम्पन्न हुई जिसमें विषय प्रवर्तन करते हुए प्रो. गोविन्दचन्द्र पाण्डेय ने प्राकृत भाषा और साहित्य की महनीयता पर प्रकाश डाला। चार शैक्षणिक सत्रों में हुई इस गोष्ठी में प्रो. कलानाथ शास्त्री, प्रो. हरीराम आचार्य, डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव, प्रो. धर्मचन्द्र जैन, प्रो. भागचंद्र 'भास्कर', डॉ. सुदीप जैन, डॉ. विजयकुमार जैन और डॉ. (श्रीमती) राका जैन प्रभृति विद्वानों ने सहभागिता की।

उदयपुर में चतुर्थ राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी– ९ से १२ नवम्बर, २००० को सुखाड़िया रंगमंच, टाउनहॉल, उदयपुर में एक चार दिवसीय चतुर्थ राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी धर्म, दर्शन, विज्ञान शोध संस्थान एवं सम्पूर्ण जैन समाज, आयड के संयुक्त तत्वावधान में सम्पन्न हुई जिसमें आचार्य कनकनंदी जी द्वारा रचित 'सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान' के परिप्रेक्ष्य में ५० प्रतिभागियों ने अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। इस अवसर पर आचार्य कनकनंदी जी और खगोल भौतिकविद् डॉ. जयन्त नार्लीकर ने अति महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की और डॉ. नार्लीकर का सम्मान किया गया।

आचार्य कुन्दकुन्द हस्तलिखित श्रुत भण्डार, खजुराहो की ग्रन्थ सूची का विमोचन– श्री सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, भावनगर के आर्थिक अनुदान से कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर द्वारा संचालित जैन साहित्य सूचीकरण परियोजना के अन्तर्गत तैयार की गई आचार्य कुन्दकुन्द हस्तलिखित श्रुत भण्डार, खजुराहो के १७४ ग्रन्थों की सूची का विमोचन २८ नवम्बर, २००० को अलवर में सम्पन्न श्री ऋषभदेव दिगम्बर जैन पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर साहू श्री रमेशचन्द जैन द्वारा किया गया।

महाराष्ट्र जैन इतिहास परिषद् की स्थापना– महाराष्ट्र के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं भाषा संबंधी जैन इतिहास की शोध खोज को दिशा मिले तथा शोधार्थियों को एक मंच प्राप्त हो, इस उद्देश्य से हाल ही में नासिक में एक महाराष्ट्र जैन इतिहास परिषद् की स्थापना हुई। इसके अध्यक्ष डॉ. गजकुमार शहा, उपाध्यक्षा डॉ. सौ. पद्मजा पाटिल, सचिव श्री श्रेणिक अन्नदाते और कोषाध्यक्ष श्री शशिकांत सैतवाल हैं तथा परिषद् कार्यालय औरंगाबाद में है। परिषद् का प्रथम अधिवेशन नासिक में आयोजित किये जाने और उस अवसर पर महाराष्ट्र के इतिहास पर शोध निबन्धों का एक संग्रह तथा एक स्मारिका प्रकाशित किये जाने की योजना है।

भामाशाह की स्मृति में डाक टिकट– २५ जून, १५४७ ई. को चित्तौड़गढ़ में ओसवाल जैन परिवार में जन्मे, महाराणा प्रताप के दीवान एवं अनन्य सहयोगी रहे दानवीर भामाशाह की स्मृति में भारत सरकार ने डाक टिकट जारी किया है।

तीर्थ संरक्षिणी महासभा के पुरातत्व सम्पर्क अधिकारियों का वार्षिक सम्मेलन– दिनांक ६ व ७ जनवरी, २००१ को नंदीश्वर फ्लोर मिल, ऐशबाग, लखनऊ में श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (तीर्थ संरक्षिणी) महासभा के पुरातत्व सम्पर्क अधिकारियों का वार्षिक सम्मेलन महासभा अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार जैन सेठी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ जिसके संयोजक रिटायर्ड वरिष्ठ पुरातत्व सम्पर्क अधिकारी श्री ज्ञानमल शाह (अहमदाबाद) और कार्यक्रम संचालक श्री कमल कुमार रांवका (लखनऊ) थे। सम्मेलन में महासभा के गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश से पधारे पुरातत्व सम्पर्क अधिकारियों के साथ-साथ कई अन्य आमंत्रित गणमान्य पुरातत्वविदों, विद्वानों और महानुभावों ने सहभागिता की।

प्रथम दिन सम्मेलन में मुख्य अतिथि श्री राकेश तिवारी, निदेशक, उ.प्र. राज्य पुरातत्व विभाग थे। महासभाध्यक्ष श्री सेठी ने पुरातत्ववेत्ता, पूर्व डायरेक्टर जनरल आर्कियालॉजी, भारत सरकार, डॉ. अजय शंकर को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए बताया कि उन्होंने ही 'तीर्थ संरक्षिणी महासभा' की स्थापना की प्रेरणा दी थी। उन्होंने कहा था आप अपनी समाज में पुरातत्व संरक्षण के बारे में जागरूकता पैदा करें। वही काम आज यह संस्था कर रही

है। संस्था द्वारा अभी तक दो करोड़ रुपया दिगम्बर जैन समाज से प्राप्त कर प्राचीन तीर्थों के जीर्णोद्धार पर खर्च किया जा चुका है। जीर्णोद्धार का कार्य विशेषकर कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में हुआ है। कई जगह प्राचीन मूर्तियां, जो जंगलों में सर्दी- गर्मी-बरसात को सहते हुए पड़ी हैं, उनकी सुरक्षा हेतु संस्था कई जगह संग्रहालयों का भी निर्माण करने जा रही है। इस अवसर पर बाहर से पधारे पुरातत्व सम्पर्क अधिकारियों ने अपने विचार व्यक्त किये। मुख्य अतिथि श्री तिवारी ने सुझाव दिया कि जहां पर कमेटी गठित करें उस कमेटी में स्थानीय अधिकारियों, विशेषकर जिलाधीश, को शामिल कर लें ताकि काम में रुकावट न आवे। साथ ही जो संग्रहालय बनायें उसमें उन मूर्तियों को भी थोड़ी सी जगह दे देवें जो जैन नहीं हैं।

दूसरे दिन सम्मेलन का शुभारंभ जैन समाज के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान इतिहास-मनीषी, विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के चित्र पर माल्यार्पण, श्री सुरेश जैन मारौरा द्वारा मंगलाचरण और श्री पी.सी. कौशल, कोलकाता, द्वारा दीप-प्रज्वलन से हुआ तथा समापन हुआ महासभाध्यक्ष सेठी जी के सुयोग्य युवा पुत्र श्री नवीन सेठी की विगत १० नवम्बर को सड़क दुर्घटना में हुई अकाल मृत्यु पर शोक संवेदना और श्रद्धांजलि अर्पित कर। अपने प्रस्ताविक उद्‌बोधन में महासभाध्यक्ष सेठी जी ने कहा, 'हम कोई भी ऐतिहासिक महत्व का कार्य करें तो डॉ. ज्योति प्रसाद जी का जो योगदान रहा है, उसे हम भुला नहीं सकते। यद्यपि आज वह हमारे बीच में नहीं हैं लेकिन उनके प्रति हमारा जो सम्मान है वह मैं कह नहीं सकता। उस व्यक्ति में जो बात थी आज हम उन्हें याद करें तो हमारा रोम-रोम पुलकित हो उठता है। पुरातत्व को आगे बढ़ाने में उनका जो योगदान रहा है, उसे हम कभी नहीं भूल सकते हैं।'

अपनी पुरा-सम्पदा का संरक्षण कैसे करें हम, इस विषय पर बोलने के लिये आमंत्रित लब्धप्रतिष्ठ पुरातत्वविद् विद्वान डॉ. शशिकान्त (लखनऊ) ने बताया कि आर्कियालॉजी में तीन महत्वपूर्ण चरण Excavation (उत्खनन), Preservation (उत्खनन में प्राप्त पुरा-सम्पदा को सुरक्षित रखना) और conservation (प्राप्त पुरा-सम्पदा का सही सार-सम्हार द्वारा संरक्षण करना) हैं। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि पुरा-सम्पदा के रूप में जो वस्तुएं हमारे पास हैं या हमें आगे प्राप्त हों उनको हम कैसे सुरक्षित-संरक्षित रखें, इस ओर हमें पूरा ध्यान देना चाहिये। जो वस्तु चाहे मूर्ति हो या सिक्का, मृत्भाण्ड हो चाहे कोई ताम्रपत्र या शिलालेख आदि जैसी है उसका उपयोग उसी तरह करें, उसके स्वरूप में परिवर्तन न करें तभी उसके महत्त्व का सही मूल्यांकन संभव है। इसी प्रसंग में उन्होंने यह सुझाव भी दिया कि जहां किसी धर्म विशेष से संबंधित कोई पुरा-सम्पदा प्राप्त हो यदि वहां उस धर्म के अनुयायी न हों और उनका समुचित संरक्षण संभव न हो उस स्थिति में उसका उचित स्थानान्तरण किये जाने पर विचार करना उचित होगा।

सम्मेलन के इस सत्र में उपस्थित राज्य संग्रहालय लखनऊ के निदेशक को लक्ष्य कर डॉ. शशिकान्त ने स्मरण दिलाया कि अबसे लगभग २५-३० वर्ष पूर्व इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के सुझाव और आग्रह पर राज्य संग्रहालय के तत्कालीन निदेशक ने संग्रहालय के कैसरबाग स्थित पुरातत्व कक्ष में गोदाम में भरी पड़ी जैन मूर्तियों और कलाकृतियों को अलग से 'जैन-वीथिका' के रूप में प्रदर्शित करने का कुछ कार्य आरंभ किया था, जो बाद में किन्हीं कारणों से अवरुद्ध हो गया। उसे यदि पुनः पूरा किया जाय तो जैन पुरा-सम्पदा के प्रति कुछ न्याय हो सकेगा। उन्होंने यह भी बताया कि डॉ. जैन ने तत्कालीन संग्रहालय निदेशक को मथुरा में कंकाली टीले से प्राप्त जैन स्तूप की प्रतिकृति भी उक्त जैन-वीथिका में स्थापित करने का सुझाव भी दिया था, जिसे मूर्त रूप लेना अभी भी शेष है।

सतना से पधारे महासभा की 'प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार पत्रिका' के सम्पादक श्री नीरज जैन ने अपनी पुरा-सम्पदा की सार-सम्हार हम कैसे करें, इसके तकनीकी पक्ष पर प्रकाश डाला। (इस सम्बन्ध में उनका आलेख अलग से इसी अंक में प्रकाशित है-सं.) उन्होंने अपने वक्तव्य में विभिन्न सरकारी कानूनों की भी चर्चा की जिनके अन्तर्गत पुरा-सम्पदा का संरक्षण, पंजीयन आदि होता है। अतः राज्य संग्रहालय लखनऊ के निदेशक डॉ. ए. के. श्रीवास्तव, जो राज्य सरकार के पुरातत्व अधिकारी और पुरा-सम्पदा के पंजीयन के प्रदेश में उच्च पदस्थ अधिकारी भी हैं, ने प्रवृत्त कानूनों की विधिक स्थिति बताते हुए उनका अनुपालन कैसे किया जाय स्पष्ट किया तथा उनके सम्बन्ध में व्याप्त भ्रान्त धारणाओं के निरसन का प्रयास किया। उन्होंने जैन आगमों की भाषा प्राकृत के अध्ययन की आवश्यकता पर भी बल दिया। अन्त में सम्मेलन के इस सत्र के मुख्य अतिथि इनटेक के निदेशक डॉ. ओम प्रकाश अग्रवाल ने अपने उद्बोधन में मंदिरों के शास्त्र भण्डारों में शास्त्रों और पुराने ग्रन्थों की हस्तलिखित पाण्डुलिपियों के सूचीकरण और उनकी सही सार-सम्हार पर बल दिया।

उत्तर प्रदेश में जैन पाण्डुलिपियों का सूचीकरण और संरक्षण— उपर्युक्त विषय पर विचार हेतु इण्डियन कन्जर्वेशन इंस्टीट्यूट, लखनऊ में १३ जनवरी, २००१ को इंस्टीट्यूट के महानिदेशक डॉ. ओमप्रकाश अग्रवाल की अध्यक्षता में एक बैठक सम्पन्न हुई जिसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त श्री धर्मवीर, श्री राजेन्द्र कुमार जैन, डॉ. शशिकान्त, श्री रमाकान्त जैन, श्री भगवान भरोसे जैन, श्री कमल कुमार रांवका, डॉ. राकेश तिवारी, श्री वी.पी. माथुर, श्रीमती ममता मिश्रा, डॉ. (श्रीमती) नन्दा विक्रम सिंघे तथा श्रीमती उषा अग्रवाल ने सहभागिता की। सर्वप्रथम डॉ. अग्रवाल ने बैठक का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए बताया कि चूंकि जैन मंदिरों और ग्रन्थागारों में अनेक जैन ग्रन्थों की पाण्डुलिपियां अभी भी

ऐसी विद्यमान हैं जिनके बारे में कोई नहीं जानता, उनमें से कुछ अच्छी दशा में हैं और कुछ बुरी, अतः पहली आवश्यकता उनका एक सर्वेक्षण कर रिपोर्ट तैयार करने की है। उस सर्वेक्षण में उनका सूचीकरण कर उनकी वर्तमान दशा जानना आवश्यक है। तदनन्तर जो पाण्डुलिपियां जीर्ण-शीर्ण हो रही हों उनका संरक्षण कैसे किया जाय, इसका उपाय सोचना और निदान करना है। लखनऊ तथा पूरे प्रदेश में यह सर्वे कार्य कैसे किया जाय, इस संबंध में उन्होंने बैठक में उपस्थित महानुभावों के विचार आमंत्रित किये। सभी समागत ने अपने-अपने विचार रखे और इस कार्य में आ सकने वाली अड़चनों से भी अवगत कराया। तदनन्तर इस कार्य की आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए इन्टेक को अपना यथाशक्य सहयोग देने का सबने आश्वासन दिया। ग्रन्थों और पाण्डुलिपियों के सर्वेक्षण हेतु एक प्रपत्र निर्धारित कर देने का भी बैठक में निर्णय लिया गया।

विद्वत् संगोष्ठी- सूर्यनगर (गाजियाबाद) में १ मार्च से ३ मार्च, २००१ तक एक त्रिदिवसीय संगोष्ठी 'डॉ. ए. एन. उपाध्ये का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' पर आयोजित हुई।

श्रवणबेलगोला में त्रिदिवसीय संगोष्ठी– १७ से १९ दिसम्बर, २००० को श्रवणबेलगोला में श्री अ.भा.दिग. जैन विद्वत्परिषद के तत्वावधान में एक त्रिदिवसीय विद्वत् संगोष्ठी ५ सत्रों में सम्पन्न हुई जिनकी अध्यक्षता क्रमशः डॉ. राजाराम जैन, डॉ. देवेन्द्र कुमार शास्त्री, पं. रतनचन्द भारिल्ल, पं. प्रकाशचंद हितैषी तथा श्री नीरज जैन ने की इसमें देश के अनेक गणमान्य विद्वानों ने भाग लिया। संगोष्ठी में पाण्डुलिपियों का सम्पादन व अनुवाद, नियमसार के आलोक में कारण कार्य परमात्मा, व्यवहारनय और निश्चयनय की उपादेयता, कर्मबन्ध प्रक्रिया और मिथ्यात्व तथा वर्तमान सन्दर्भ में जैन पत्रों का उत्तरदायित्व विषयों पर चर्चा की गई।

चन्द्रगिरि महोत्सव- बसन्त पंचमी, २९ जनवरी को श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला में स्वस्तिश्री चारुकीर्ति भट्टारक महास्वामी जी के सान्निध्य में और कर्नाटक सरकार के राजस्व मंत्री श्री एच.सी. श्रीकंठय्या की अध्यक्षता में चन्द्रगिरि चिक्कबेट्ट महोत्सव का उद्घाटन हुआ जिसका समापन महाभिषेकपूर्वक ९ मई से १३ मई, २००१ तक चलने वाले कार्यक्रम के साथ होगा। उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि कर्नाटक के ईंधन मंत्री श्री वीर कुमार ए. पाटिल थे। इस अवसर पर एक स्मारिका का विमोचन हासन से लोकसभा सदस्य श्री जी. पुट्टस्वामी गौड़ा ने किया।

प्रयाग में भ० ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव- गणिनी प्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमतीजी की प्रेरणा से प्रयाग में (इलाहाबाद-बनारस राजमार्ग पर अन्दावा मोड़ के निकट) ४ फरवरी से ८ फरवरी, २००१ तक 'भगवान ऋषभनाथ का निर्वाण महोत्सव महाकुंभ' धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर वहां स्थापित की गई भ. ऋषभदेव की १४ फुटीय पद्मासन

प्रतिमा का मस्तकाभिषेक व अन्य भव्य कार्यक्रम आयोजित हुए।

कुण्डलपुर में बड़े बाबा का महामस्तकाभिषेक– २१ फरवरी से २७ फरवरी, २००१ तक कुण्डलपुर (दमोह, मध्यप्रदेश) में आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर म० के ससंघ सानिध्य में सम्पन्न हुए महोत्सव में, जिसे 'जैन कुंभ' की संज्ञा दी गई, देश-विदेश से लाखों व्यक्तियों ने सहभागिता की। बड़े बाबा आदिनाथ (ऋषभदेव) भगवान की अतिशयकारी प्रतिमा के १५०० वर्ष पूरे होने के प्रसंग में यह महामस्तकाभिषेक आयोजित हुआ।

भगवान महावीर का २६००वाँ जन्मोत्सव : उत्तर प्रदेश सरकार की सहभागिता

राज्य स्तरीय समिति का गठन

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के २६००वें जन्म महोत्सव पर उ.प्र. में राज्य स्तरीय विभिन्न कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु महामहिम राज्यपाल महोदय ने 'राज्य स्तरीय समिति' का गठन निम्नवत किया है- अध्यक्ष- मा० मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश; सदस्य- मा० वित्तमंत्री, उ.प्र.; मा० संस्कृति मंत्री, उ.प्र.; मा. पर्यटन मंत्री, उ०प्र०; मा. सूचना मंत्री, उ.प्र.; मा. शिक्षा मंत्री, उ.प्र.; डॉ. अरविन्द कुमार जैन, मा. राज्यमंत्री, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य; मुख्य सचिव, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, वित्त, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, पर्यटन व संस्कृति, उ.प्र. शासन; सचिव, सूचना, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, शिक्षा, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, नियोजन, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, समाज कल्याण, उ.प्र. शासन; प्रमुख सचिव, उच्च शिक्षा, उ.प्र. शासन; श्री प्रकाश झावेरी, महासचिव, भगवान महावीर २६००वाँ जन्म कल्याणक महोत्सव महासमिति, भगवान महावीर केन्द्र, नियर साउथ कैम्पस, दिल्ली, विश्वविद्यालय, बेनिये जुआरेज रोड, नई दिल्ली; श्री मनोहरलाल जैन, अध्यक्ष, आगरा दिगम्बर जैन परिषद; डॉ० ओ.पी. अग्रवाल, महानिदेशक, इनटेक, लखनऊ; श्री सागरमल जैन, (पूर्व निदेशक, पार्श्वनाथ जैन रिसर्च इंस्टीट्यूट, वाराणसी), सागर टेन्ट हाउस, नई सड़क, शाजापुर (म.प्र.); श्री पवन जैन, विमलांचल, हरीनगर, अलीगढ़; श्री हजारीमल बांठिया, ५२/१६, शक्कर पट्टी, कानपुर; निदेशक, संस्कृति विभाग, उ.प्र.; निदेशक, उ.प्र. जैन विद्या शोध संस्थान; निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ.प्र; निदेशक, दूरदर्शन, लखनऊ; निदेशक, आकाशवाणी, लखनऊ; श्री नरेन्द्र मोहन, दैनिक जागरण, लखनऊ; श्री अशोक अग्रवाल, सम्पादक, अमर उजाला, अभिनंदन, ३१, भरतपुर हाउस, आगरा; श्री निर्मल कुमार सेठी, अध्यक्ष- श्री भा.दिग.जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा, श्री नंदीश्वर फ्लोर मिल, मिल रोड, ऐशबाग, लखनऊ; श्री स्वरूपचंद्र जैन, मेसर्स मारसंस इंडस्ट्रीज, १/१८६, देहली गेट, सिविल लाइन्स, आगरा; श्री भारतभूषण जैन, के-११४, कविनगर, गाजियाबाद; प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन, सम्पादक जैन गजट, नई बस्ती, फिरोजाबाद; श्री राकेश जैन, भा.ज.पा. कार्यालय, गांधीरोड, बड़ौत; श्री सुधीर जैन,

१६३/ए/५, सिविल लाइन्स, बरेली; डॉ. रिखबचंद जी श्रीमाल, ३२२/१३, सरंगीटोला, चौक, लखनऊ; डॉ० भागचंद जैन, पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई.टी.आई.मार्ग, करौंदी, वाराणसी; श्री निर्मल कुमार जैन, सीतापुर; श्री संदेश जैन, १४६, जयपुर हाउस, आगरा; एवं श्री अशोक जैन, अध्यक्ष पीताम्बर मूर्ति पूजक संघ, आगरा। सचिव, संस्कृति, उ.प्र. शासन को इस समिति का संयोजक बनाया गया है।

उपरोक्त समिति भगवान तीर्थंकर महावीर जन्म कल्याणक महोत्सव में प्रदेश स्तरीय कार्यक्रमों की योजना बनायेगी तथा यथावश्यक अन्य सदस्यों को भी सम्मिलित (कोआप्ट) करेगी। समिति की कार्यावधि समिति के गठन की तिथि से ३१.३.२००२ तक होगी।

८ मार्च को लखनऊ में मा० मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में उक्त राज्य स्तरीय समिति की बैठक हुई जिसमें चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर का २६००वां जन्म महोत्सव प्रदेश में धूमधाम से मनाने हेतु आगामी ६ अप्रैल से ३१ मार्च, २००२ तक विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन की रूपरेखा तय करने के लिये प्रदेश के मुख्य सचिव श्री भोलानाथ तिवारी की अध्यक्षता में एक कार्यक्रम क्रियान्वयन समिति का भी गठन किया गया। भगवान महावीर के जन्म दिवस ६ अप्रैल को 'अहिंसा दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया।

मुख्यमंत्री ने कहा कि भारतीय संस्कृति को जैन धर्म की अवधारणा ने सर्वाधिक संबल प्रदान किया है। वैदिक संस्कृति का मूल चिंतन कि जो जड़ में है वही चेतन में है, को हर स्तर पर जैन धर्म ने स्थापित किया है। सरकार हर स्तर पर जैन पंथ को बढ़ावा देने और उसका संरक्षण करने के प्रति गंभीर है।

इस बैठक में मुख्यमंत्री श्री राजनाथ सिंह ने कई अन्य महत्वपूर्ण निर्णय लिये। उन्होंने उत्तर प्रदेश में जन्मे सभी तीर्थंकरों और भगवान महावीर के जीवन, शिक्षाओं-उपदेशों की जानकारी पूरे संसार को देने के लिये एक वेबसाइट बनाने की मंजूरी देते हुये इस वेबसाइट के आयोजन हेतु राष्ट्रीय एकीकरण विभाग में एक विशेष सेल गठित करने के साथ ही १५ लाख रुपये की स्वीकृति भी हाथों हाथ प्रदान की। उन्होंने कहा कि भगवान महावीर की जयंती से संबंधित पांचों कल्याणक दिवसों का समारोहपूर्वक आयोजन होगा और जिस तरह सरकार ने महाकुंभ की व्यवस्था तथा प्रचार- प्रसार का काम संभाला था उसी तरह भगवान महावीर की जयंती के आयोजन को महत्व दिया जायेगा। उन्होंने जैन धर्म से संबंधित शोध संस्थानों को और अधिक सक्रिय बनाने की भी घोषणा की।

बैठक में जैन समाज तथा राष्ट्रीय एकीकरण की राज्य समिति के पदाधिकारियों से चर्चा के दौरान मुख्यमंत्री श्री राजनाथ सिंह ने संग्रहालयों के गोदामों में पड़ी पूर्ण तथा खंडित दोनों तरह की जैन मूर्तियों के बारे में जल्दी ही समुचित निर्णय लेकर पूज्य मूर्तियों को जैन समाज के मंदिरों को देने पर विचार करने का आश्वासन दिया।

उन्होंने भगवान महावीर की जयंती के अवसर पर पूरे प्रदेश में विभिन्न कार्यक्रमों और प्रतियोगिताओं के आयोजन, गुजरात के माडल पर उत्तर प्रदेश में जैन दर्शन की शिक्षा और शोध कार्य हेतु विश्वविद्यालयों में पीठ की स्थापना, किसी विश्वविद्यालय तथा सड़कों और पार्कों का भगवान महावीर के नाम पर नामकरण, प्रदेश में जन्मे विभिन्न तीर्थंकरों के जन्मस्थलों का विकास तथा वहाँ जैन धर्मचक्र एवं स्तूप स्थापना के संबंध में उच्च स्तरीय विचारोपरान्त प्रभावी निर्णय लेने का भी आश्वासन दिया।

भगवान महावीर का २६००वां जन्म महोत्सव : राजस्थान सरकार— राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलौत ने भ. महावीर जन्म कल्याणक राज्य स्तरीय समारोह समिति की प्रथम बैठक में घोषणा की कि वर्ष भर चलने वाले 'अहिंसा वर्ष' में राज्य सरकार भ. महावीर के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार पर एक करोड़ खर्च करेगी तथा कार्यक्रमों की रूपरेखा तय करने हेतु कैबिनेट मंत्री की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जायेगी। बैठक में 'भ. महावीर राष्ट्रीय फाउण्डेशन' तथा राज्य में भ. महावीर के नाम से आई.आई.आई.टी. की स्थापना के सुझाव स्वीकार किये गये।

कोलकाता में भगवान महावीर प्रदर्शनी— २६ फरवरी से ५ मार्च, २००१ तक एकेडेमी ऑफ फाइन आर्ट्स, कोलकाता में एक भव्य प्रदर्शनी आयोजित हुई जिसमें भ. महावीर के जीवन पर आधारित हस्तचित्र और काफी संख्या में हस्तलिखित/चित्रित कागज एवं ताड़पत्रों पर अंकित ग्रन्थ एवं शास्त्र प्रदर्शित किये गये। प्रदर्शनी का उद्घाटन सुप्रसिद्ध विद्वान प्रो. कल्याणमल लोढ़ा ने किया।

जैन संस्कृति संगोष्ठी- जयपुर में १६ से १८ मार्च तक एक त्रिदिवसीय संगोष्ठी 'जैन संस्कृति का भारतीय संस्कृति को योगदान' विषय पर राजस्थान विश्वविद्यालय के जैन अनुशीलन केन्द्र में हुई, जिसका उद्घाटन लोकायुक्त श्री मिलापचन्द जैन ने किया और अध्यक्ष वि.वि. के कुलपति प्रो. के.एल. कमल थे।

पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम- दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार प्राकृत सार्टिफिकेट पाठ्यक्रम' का आगामी सत्र १ जुलाई, २००१ से प्रारंभ होगा। इसमें प्राकृत-संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/विषयों के प्राध्यापक; अपभ्रंश, प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक २५ मार्च से १५ अप्रैल २००१ तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-४ से प्राप्त किये जा सकते हैं। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुंचने की अन्तिम तारीख १५ मई, २००१ है।

साहित्य सत्कार

(१) सन्मति तर्क (मूल ले०- पं. सुखलाल संघवी व पं. बेचरदास दोशी) : अंग्रेजी अनुवाद- ए. एस. गोपानी; प्रकाशक-लालभाई दलपत भाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर, अहमदाबाद ३८०००९; प्रकाशन वर्ष-२००० ई.; पृष्ठ-१५१; मूल्य रु. २२५।

भारतीय दर्शनों में जैन दर्शन का अपना एक विशिष्ट स्थान है। अनेकान्त सिद्धान्त इसकी मौलिक एवं प्रमुख विशिष्टता है। यद्यपि अनेकान्त सिद्धान्त के बीज आगमों में विद्यमान हैं, उन्हें पल्लवित कर प्रतिपादित करने का श्रेय श्वेताम्बर आम्नाय में सुप्रसिद्ध नैयायिक एवं तर्कशास्त्र पंडित आचार्य सिद्धसेन दिवाकर (५वीं शती ई.) को ही जाता है, जिन्होंने प्राकृत भाषा की १६६ गाथाओं में निबद्ध अपने ग्रंथ सम्मइसुत्तं (अपर नाम 'सन्मति प्रकरण') में इस सिद्धान्त का विशद् विवेचन किया है। श्री अभय देव सूरि (९५०-१००० ई.) ने इस ग्रंथ पर संस्कृत भाषा में एक बृहद् टीका 'वादमहार्णव' (अपर नाम तत्व बोध-विधायणी) रची। इस टीका के ही प्रकाश में पंडित द्वय श्री सुखलाल संघवी व श्री बेचरदास दोशी ने गुजराती भाषा में इस ग्रंथ की टीका की है जिसका अंग्रेजी भाषा में श्री ए. एस. गोपानी ने समीक्ष्य ग्रंथ में अनुवाद प्रस्तुत किया है। प्रारंभ के १६२ पृष्ठों की प्रस्तावना में, सिद्धसेन उनका समय व जीवनी, अन्य जैन व जैनेतर आचार्यों से उनका तुलनात्मक अध्ययन, टीकाकार अभय देवसूरि तथा उनकी टीका, सन्मति सूत्र व उसकी विषयवस्तु, सिद्धसेन की द्वात्रिंशिकाएं, आदि पर विद्वत्तापूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रंथ का प्रथम संस्करण सन् १९३९ में प्रकाशित किया गया था जो अब अप्राप्य हो गया है। अब उसका यह संशोधित संस्करण प्रकाशित किया गया है।

(२) काव्यानुशासनम्- आचार्य हेमचन्द विरचित, समालोचनात्मक प्रस्तावना सहित गुजराती भाषा में अनुवादः सं- डॉ० तपस्वी नान्दी; प्रकाशक- ल. द. भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर, अहमदाबाद-९; प्रकाशन वर्ष-२००० ई.; पृष्ठ ४०८; मूल्य- रु. ४८०।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, कलिकाल सर्वज्ञ के विरुद्ध से अलंकृत, जैनाचार्य श्री हेमचन्द्र विरचित संस्कृत भाषा का यह काव्य शास्त्र का एक सर्वांगीण ग्रंथ है। सूत्र शैली में निबद्ध इस ग्रंथ में ८ अध्यायों में विभक्त कुल २०८ सूत्र हैं। इनमें काव्य लक्षण, रस-गुण दोष विचार, शब्दालंकार, अर्थालंकार, नाट्य मीमांसा, आदि शीर्षकों के अन्तर्गत विषयवस्तु का निरूपण किया गया है। १२२ पृष्ठों की भूमिका में विद्वान सम्पादक जी ने प्रत्येक अध्याय पर काव्य -शास्त्रोक्त विवेचन प्रस्तुत किया है। काव्य शास्त्र के अध्येताओं के लिए इस ग्रंथ का प्रणयन बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

पंचकल्याण गजरथ समीक्षा : ले. मुनि श्री सरलसागर म.; प्रकाशक- अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना (सागर); संशोधित द्वितीय संस्करण-२०००ई.; पृष्ठ-६०

पूज्य मुनि श्री ने वर्तमान में बोलियों एवं गजरथों के द्वारा पंचकल्याणकों के विकृत हो रहे स्वरूप के प्रति दिगम्बर जैन समाज को जागृत करने के प्रयोजन से इस पुस्तक को लिखा है। मुनि श्री के अनुसार ये दोनों परम्पराएं धर्म विरुद्ध हैं और इन्होंने पंचकल्याणकों को महत्त्वहीन बना दिया है। पंचकल्याणक के साथ गजरथ की परम्परा बुन्देलखंड में पनपी पर यह धर्म विरुद्ध तो है ही प्रतिष्ठा शास्त्र के भी विरुद्ध ही है और इसने पंचकल्याणक को ही महत्वहीन कर दिया है। अब तो अधिकाधिक रुपया बटोरने के लिए तीन-पांच-सात नौ गजरथ निकाले जाने लगे हैं यहां तक कि एक मुनि जी ने सिंहरथ भी निकलवा दिया। पंचकल्याणक को महत्वहीन बना देने में संगीत भी एक कारण है। कोई भी छोटा बड़ा धार्मिक आयोजन हो, बिना संगीत के नीरस ही समझा जाता है। संगीत में भी अधिकतर फिल्मी तर्जों पर गाए जाने वाले भजन ही रहते हैं तथा उन्हें दूर से सुनने में मात्र तर्जें ही सुनने समझने में आती हैं। वाद्य यंत्रों में चर्म व अन्य मांस उत्पादों का प्रयोग होता ही है। संगीतकारों से कमीशन भी खाया जाता है। पंचकल्याणक को महत्वहीन बनाने का एक बड़ा कारण आजकल के अर्थ लोलुप प्रतिष्ठाचार्य भी हैं जिन्होंने धार्मिक आयोजनों को ही अपना व्यवसाय बना लिया है। पंचकल्याणकों का सामूहिक आयोजन बोलियों का जनक है, सामूहिक लोभ के कारण इन आयोजनों में बोलियों का बाहुल्य होता जा रहा है, बोलियां धार्मिक कार्यक्रमों पर छाई रहती हैं, बोलियों में कमीशन भी खाया जाने लगा है। बोलियां पाप है, समाज के लिए अभिशाप बन गई हैं। बोलियों के माध्यम से दिया गया द्रव्य दान नहीं, यह तो अपने नाम का विज्ञापन करना है। न ही मन्दिर बोलिया लगाने का स्थान है, आदि।

मुनि श्री सरलसागर जी अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी हैं। वे स्वयं एक पंचकल्याणक सहित अनेकों विधान की अगुवाई किए हैं। इस पुस्तक में व्यक्त किए गए क्रांतिकारी विचार उनके स्वानुभव पर आधारित हैं। पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९९४ में प्रकाशित हुआ था। उसके समाप्त हो जाने के कारण अब यह संशोधित दूसरा संस्करण प्रकाशित किया गया है। आशा है समाज इस पुस्तक की शिक्षा ग्रहण कर पंचकल्याणक जैसे प्रमुख धार्मिक आयोजनों को महत्वहीन होने से बचाएगी।

अनेकांत भवन ग्रंथ रत्नावली १, २ : सं०- ब्र० संदीप 'सरल'; प्रकाशक- अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना (सागर) म.प्र; प्र. वर्ष- २००० ई०; पृष्ठ २०३।

समीक्ष्य ग्रन्थ दो भागों में विभाजित है। प्रथम भाग में श्री सहस्रकूट चैत्यालय सरस्वती

भंडार अजमेर से प्राप्त प्राकृत, संस्कृत व हिंदी के १२२१ ग्रंथों की पांडुलिपियों का परिचय संकलित किया गया है तथा दूसरे भाग में विभिन्न शास्त्र भंडारों से संकलित १४७० पांडुलिपियों का परिचय प्रस्तुत किया गया है। परिचय-ग्रंथ का नाम, लेखक/टीकाकार का नाम, ग्रंथ की भाषा-लिपि, लिपिकाल, ग्रंथ की स्थिति-उत्तम/संतोषजनक/क्षरणयुक्त/अति जीर्णशीर्ण। पूर्ण-अपूर्ण आदि १४ स्तम्भों में दिया गया है। यदि 'विशेष विवरण' में जहां आवश्यक हो, यह भी अंकित कर दिया जाया करे कि ग्रंथ ताड़पत्र पर या भोजपत्र पर लिपिबद्ध किया गया है तथा यदि अप्रकाशित है तो उसका भी उल्लेख दिया जाया करे तो परिचय और पूर्ण हो जाएगा।

वर्गीकरण में थोड़ी और सावधानी अपेक्षित है। **नाटक समयसार** को पद, छन्द, नाटक, विलास विषयक ग्रंथों के अन्तर्गत सूचीबद्ध किया गया है जबकि यह दर्शन का ग्रंथ है भले ही इसकी रचना हिंदी पद्य में की गई है तथा इसका उचित स्थान धर्म, दर्शन, आचार के ग्रंथों में होना चाहिए।

ग्रंथ के प्रथम आवरण पृष्ठ पर संस्थान में संरक्षित संवत् १५१३ में आचार्य सूर्यकीर्ति द्वारा लिपिकृत **कार्तिकेयानुप्रेक्षा** की दुर्लभ प्रति के एक पृष्ठ का छाया चित्र दिया गया है तथा अंतिम आवरण पृष्ठ पर सचित्र **रविव्रत कथा** के बहुमूल्य रंगीन चित्र दिए गए हैं जिनसे ग्रंथ की सार्थकता और उपादेयता स्वयं सिद्ध होती है।

अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान के संस्थापक एवं प्राण इस ग्रंथ के सम्पादक ब्र. संदीप सरल जी विगत छह वर्षों से हस्तलिखित ग्रंथों के संकलन, संरक्षण एवं सूचीकरण के कार्य में पूर्ण रूप से समर्पित हैं। प्रस्तुत ग्रंथ उनके अकथ परिश्रम का एक सुफल है।

अनेकान्त दर्पण : सं.-डॉ. रतन चंद जैन एवं पं. अभय कुमार शास्त्री; प्रकाशक-अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना (सागर) - ४७०११३; वर्ष-२०००; पृष्ठ-१०३।

संस्थान की इस वर्ष २००१ की शोध वार्षिकी में सुलेख खण्ड में १२ लेख तथा संस्थान परिचायक खण्ड में चित्रावली सहित १२ लेख हैं। वार्षिकी की सभी सामग्री पठनीय है, पर (१) 'जैन शोध संस्थानों की समस्याएं एवं समाधान'- डॉ० अनुपम जैन, (२) 'संस्थान में संरक्षित अप्रकाशित ग्रंथों की सूची'- ब्र. संदीप सरल, तथा (३) 'बुन्देलखंडी कवि नवलशाह का पद साहित्य' विशेष महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय हैं।

- अजित प्रसाद जैन

Preservation of Art Objects and Library Materials : by Dr. O.P. Agrawal Pub. Director, National Book Trust, India, A-5 Green Park, New Delhi-110016; Second Edition 1999; pp. 112+xvi; Price Rs. 40/-

This book from the pen of learned Dr. O.P. Agrawal, Director General, Indian Council of Conservation Institutes, Lucknow, was first brought out in 1993 and was prepared with a view to enlighten museums incharge, curators, librarians and art collectors, in simple way, with their fundamental duties of preservation and conservation of the material in their custody and how can they perform it. Some new facts of preservation have come to light since the publication of the first edition. Hence, the learned author has made an attempt to incorporate such new material at appropriate places in the present revised edition. He has provided information so far available about control of insects without the use of chemicals and added a new chapter about the necessity of periodic assessment of collection in museums and libraries therein. Dr Agrawal deserves congratulations for bringing out this informative book for the benefit of not only museums and libraries but also for private collectors.

समाधि दीपक : सम्पादिका- श्री १०५ आर्यिका विशुद्धमती जी; प्र. श्री जिनराज जैन, २/२६, अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२; महावीर जयंती सं. २०४० (१९८३ ई.); पृ० ८७+६।

तपः पूत जीवन का अन्तिम कर्तव्य सल्लेखना मानने वाली, और सफल समाधिमरण के लिये गुरु के समीप निर्दोषरीत्या अपने दोषों की आलोचना में विश्वास रखने वाली आ० विशुद्धमती जी ने इस भावना से कि कल्याणेच्छु त्यागीवृन्द निर्दोष आलोचना के संस्कार दृढ़ बनाते रहें, आचार्य शिवकोटि कृत **मूलाराधना** अपरनाम **भगवती आराधना**; सकलकीर्ति गणि विरचित **समाधिमरणोत्साह दीपक**; पं. सदासुखदास द्वारा हिन्दी में निबद्ध **मृत्यु महोत्सव**, पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित **सल्लेखनाया समाधिमरण**, पं. आशाधर रचित **सागार धर्मामृत** तथा आचार्य समन्तभद्र द्वारा निबद्ध **रत्नकरण्डश्रावकाचार** प्रभृति ग्रन्थों से प्रसंग प्रकरणों को यथावत् एवं यत्किंचित् परिवर्तन के साथ संग्रहीत कर अबसे लगभग २५ वर्ष पूर्व **समाधिदीपक** पुस्तक का प्रणयन किया था। साथ ही सन् १९७५ में सवाईमाधोपुर वर्षायोग में प्राप्त, किसी अज्ञात लेखक की ढूंढारी भाषा में निबद्ध समाधिमरण धारण करने वाले गृहस्थ के माध्यम से सुन्दर उद्बोधन प्रस्तुत करने वाली और

भेद विज्ञान समझाने वाली कृति का खड़ी बोली रूपान्तरण उसमें समाहित किया था। कृति में समाहित सभी कथाएं आर्यिका जी ने **आराधनाकथाकोश** से ली बताई हैं। यह उल्लेखनीय है कि **आराधनाकथाकोश** नाम से दो कृतियां हैं- एक ईस्वी १०२३-६६ में हुए श्रीचन्द्र द्वारा रचित है, दूसरी ईस्वी १५१८ में हुए ब्रह्म नेमिदत्त द्वारा। विद्वान सम्पादिका जी ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि इनमें से किसकी कृति से कथाएं ली गई है। प्रस्तुत पुस्तक प्रथमतः १६७६ में प्रकाशित हुई थी। उक्त संस्करण समाप्त हो जाने पर और उसकी मांग बनी रहने के कारण उसका यह पुनर्मुद्रण संशोधित रूप में हुआ है। सरल भाषा-शैली में इस सर्वजनोपयोगी पुस्तक की प्रस्तुति के लिये आर्यिका जी को साधुवाद!

चिन्तन-मनन-विचार : लेखक- श्री महावीर प्रसाद जैन सर्राफ (नई दिल्ली); प्र. भरत पवैया, तारादेवी पवैया ग्रंथमाला, ४४, इब्राहीमपुरा, भोपाल-४६२००१; द्वि.आ. २६.१.२००१; पृ. १६

प्रस्तुत पुस्तिका वैराग्योन्मुख वयोवृद्ध सुश्रावक, शाकाहार प्रचारक, श्री महावीर प्रसाद जी के चिन्तन-मनन का प्रसून है। इसमें श्री राजमल पवैया रचित **बारह भावना** भी समाहित है।

आर्यिका, आर्यिका है; मुनि नहीं : लेखक- श्री रतनलाल बैनाड़ा; प्र. ज्ञानोदय प्रकाशन, लार्डगंज दिगम्बर जैन मंदिर, जबलपुर (म.प्र.); पृ. २४+२+आवरण।

विगत एक वर्ष में जैन पत्र-पत्रिकाओं में आर्यिकाओं की नवधाभक्ति को लेकर दो विचारधाराएं-एक समर्थन और दूसरी विरोध में-प्रकाश में आईं। १७.२.२००० के जैन गजट और तदनन्तर अनेक अंकों में प्रकाशित सामग्री ने मननशील बैनाड़ा जी के मन को उद्वेलित किया। उन्होंने आगमों में समाधान खोजा और अपने विचार प्रश्नोत्तर शैली में प्रस्तुत ट्रैक्ट में प्रकट किये। उनके विचारों का सार **शोधादर्श**-४१ में पृष्ठ २२३-२२४ पर पहले ही प्रकाशित किया जा चुका है।

रत्नाकर : मूल कन्नड लेखक- प्रो. जी. ब्रह्मप्पा एवं श्री एम.वी. श्रीनिवास; हिन्दी अनुवाद-डॉ. एन.एस. दक्षिणामूर्ति; प्र. एस.डी.जे.एम.आई. मैनेजिंग कमेटी, श्रवणबेलगोल-५७३१३५ (जि. हासन); द्वि.सं. बसंत पंचमी २००१; पृ. १८०; मूल्य रु. ६०/-

सफल उपन्यास वही है कि पाठक पढ़ना प्रारंभ करे तो मनोयोगपूर्वक पढ़ता चला जाये और बीच में आने वाला व्यवधान उसे खले। **रत्नाकर** इस कसौटी पर खरा उतरा है। मूलतः कन्नड में प्रो. जी. ब्रह्मप्पा और श्री एम.वी. श्रीनिवास की लेखनी से प्रसूत इस उपन्यास में कर्नाटक में १६वीं शती ईस्वी के मध्य हुए एक ऐतिहासिक व्यक्ति सन्तकवि

'रत्नाकर' की जीवन-गाथा, उपन्यासकार द्वय की कल्पना के रंगों के साथ, अनुस्यूत है। मूडबिद्री में यशस्वति और देवराजय्या के घर जन्मे; बालपन से ही सरल स्वभाव, निश्छल हृदय, स्पष्टवादिता और संवेदनशीलता से युक्त; विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न; रूढ़ियों का विरोध कर 'अनागतं यः कुरुते सः शोभते' की उक्ति को चरितार्थ करने वाले; बालपन में ही **निरंजन-स्तुति, शोभन संधि** और **त्रिलोक-शतक** की रचना कर और बाद में **भरतेश-वैभव, रत्नाकर-शतक, अपराजित-शतक** जैसे काव्यों से कन्नड भारती को अलंकृत करने वाले माँ वाणी के वरद पुत्र; कार्कल के भैरव नरेश के यहां कुछ समय के लिये राज्याश्रय प्राप्त; प्रेमी हृदय, पर परिणय की परिणति से वंचित रह जाने वाले; जन-जन के श्रद्धाभाजन सन्त-कवि की यह जीवन-गाथा बड़ी ही मार्मिक है। उपन्यास में चित्रित तत्कालीन धार्मिक-सामाजिक स्थिति और विद्वज्जन में व्याप्त परस्पर वैमनस्य-ईर्ष्या का दृश्य आज भी यत्र-तत्र किसी न किसी रूप में विद्यमान है। अनेक पुरातन जैन ग्रन्थों आदि की जानकारी समाहित किये हुए यह कृति रोचक होने के साथ-साथ ज्ञानवर्द्धक भी है।

इसे प्रथमतः पढ़ने का सुयोग मुझे सन् १९७६ में मिला जब स्वयं उपन्यासकार ब्रह्मप्पा जी ने इसकी प्रति मेरे पिताजी को भेंट स्वरूप भेजी थी। इसने मेरे मन को मुग्ध किया था। अब भाई नीरज जी से उसकी यह भव्य द्वितीय आवृत्ति पाकर पुरानी स्मृति जाग उठी। इसे पुनः पढ़ने और इसके बारे में लेखनी चलाने का लोभ संवरण नहीं कर सका। इस अनुपम उपन्यास की प्रस्तुति हेतु उपन्यासकार द्वय तो बधाई के पात्र हैं ही, इसे प्रांजल प्रवहमान भाषा में हिन्दी जगत को भेंट करने हेतु इसके रूपान्तरकार डॉ. दक्षिणामूर्ति भी साधुवादार्ह है।

चामुण्डराय वैभव : मूल कन्नड़ लेखक- श्री जीवंधर कुमार होतपेटे; हिन्दी अनुवाद-प्रो. धरणेन्द्र कुरकुरी; प्र. एस.डी.जे.एम.आई. मैनेजिंग कमेटी, श्रवणबेलगोल-५७३१३५ (जि. हासन-कर्नाटक); प्र.सं. बसन्त पंचमी २००१; पृ. ७८; मूल्य रु. २४/-

वर्तमान मैसूर प्रदेश के अधिकांश भाग तथा कावेरी नदी की पूरी घाटी में व्याप्त गंगवाडि में प्राचीन काल में सैकड़ों वर्ष गंगवंश के नरेशों का प्रभुत्व रहा। ९६१-९७४ ई. में हुए गंग नरेश मार सिंह, जिनके विरुद 'पल्लवमल', 'नोलम्बकुलान्तक व 'गुत्तियगंग' रहे, और उनके उत्तराधिकारी राचमल्ल (कृति में उल्लिखित राजमल) सत्यवाक्य चतुर्थ (९७६-९८४ ई.) के राज्य में अप्रतिम अमात्य और सुदक्ष सेनापति रहे चामुण्डय्या अपरनाम गोम्मट, जिन्हें राजा ने उनके पराक्रम से प्रसन्न हो 'समर-परशुराम' और 'वीर-मार्तण्ड' की तथा उनके राजनीतिक बुद्धि-चातुर्य, स्वामी भक्ति और भद्रता से प्रभावित हो 'राय' की उपाधि प्रदान की थी तथा जिन्हें अन्य विविध विरुद भी योग्यता एवं गुणानुसार प्राप्त रहे; और जिन्हें अपनी माता काललादेवी की इच्छापूर्ति हेतु श्रवणबेलगोल में विंध्यगिरि शिखर पर

बाहुबली स्वामी की विश्व विस्मयकारी १७ मीटर उत्तुंग मूर्ति का निर्माण कराने तथा **चामुण्डराय पुराण** और आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती कृत **गोम्मटसार** पर **वीर-मार्त्तण्ड वृत्ति** कन्नड भाषा में रचने का श्रेय प्राप्त है; के जीवन की कुछ विशिष्ट घटनाओं को रूपायित करने हेतु कन्नड़ कथाकार श्री होतपेटे ने इस आख्यायिका का प्रणयन किया है। प्रस्तुति रोचक है, पाठक को बांधे रखती है। इसे हिन्दी जगत को भेंट करने वाले प्रो. कुरकुरी यदि स्वयं हिन्दी भाषी होते और हिन्दी मुहावरों आदि के अच्छे जानकार रहे होते, तो रूपान्तरण और अधिक प्रवाहपूर्ण और रोचक हो गया होता। उत्तम कागज और भव्य साज-सज्जा के साथ-साथ यदि मुद्रण-त्रुटियों से बचने पर भी ध्यान दिया गया होता, तो प्रस्तुत कृति में चार-चाँद लग जाते।

'प्रस्तावना' लेखक के इन वाक्यों "यद्यपि लेखक द्वारा गोमटेश्वर की प्रतिष्ठा और चन्द्रगिरि पर चाममुण्डराय बसदि के निर्माणकाल के आंकलन से सहमत होना हमारे लिये कठिन है, परन्तु यह इतिहास नहीं, आख्यान है। कालक्रम आदि का ऊहापोह यहां उपयुक्त नहीं" के सम्बन्ध में इतना ही कहना चाहूंगा कि कृति में कृतिकार इन घटनाओं की तिथियों के विषय में मौन है। जहाँ तक अपनी जानकारी है, यह सुप्रचारित मत है कि गोम्मटेश्वर बाहुबली मूर्ति की प्रतिष्ठा और चामुण्डराय बसदि का निर्माण, दोनों ही, चामुण्डराय के जीवनकाल में हुए, भले ही ये घटनायें आगे-पीछे घटित हुई हों। 'वीर' के २२.२.१९८१ के गोम्मटेश अंक में अपने सम्पादकीय में इतिहास- मनीषी डा. ज्योति प्रसाद जैन ने उक्त मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा तिथि महावीर निर्वाण संवत् १५०८ (सन् ९८१ ई.) की चैत्र शुक्ल पंचमी, दिन रविवार सूचित की है और उस महान मूर्तीशिल्पी, जिसे गोम्मटेश्वर की उक्त अद्वितीय मूर्ति के निर्माण का श्रेय है, का नाम 'अरिष्टनेमि' उल्लिखित किया है।

पुस्तक में स्थान-स्थान पर चिक्कबेट्ट (छोटी पहाड़ी) अपरनाम कटवप्र या कलवप्पु (शैलगुहा) और चन्द्रगिरि का सम्बन्ध ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में हुए बताये अन्तिम श्रुतकेवलि भद्रबाहु स्वामी के वहां ससंघ आगमन, उनके द्वारा अपने शिष्य सम्राट चन्द्रगुप्त (मौर्य) के साथ वहां रहने और दोनों के समाधिमरण से जोड़ा गया है। अन्तिम श्रुतकेवलि भद्रबाहु, दिगम्बर परम्परा के अनुसार, महावीर निर्वाण संवत् १३३ से १६२ (ई.पू. ३९४-३६५) तक तथा श्वेताम्बर परम्परानुसार म.नि.सं. १५४ से १७८ (ई.पू. ३७३-३४९) तक भगवान महावीर के आठवें पट्टधर रहे थे। और इतिहास में मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त का जन्म ई.पू. ३४५ में होने तथा उसके द्वारा ई.पू. ३२३ से २९८ तक २५ वर्ष राज्य करने का उल्लेख आता है। अतः विवेच्य पुस्तक में इन दोनों का परस्पर इस प्रकार चन्द्रगिरि से सम्बन्ध जोड़ा जाना कहाँ तक इतिहास सम्मत और समीचीन है, कहना कठिन है।

आचार्य श्री मानतुंग, भक्त कामदेव हनुमान और सुदर्शन स्वामी के चित्र : चित्रकार

श्री सुबोध कुमार जैन, मानद निदेशक, श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

८० वर्षीय, बहुआयामी प्रतिभा के धनी श्री सुबोध कुमार जैन की तूलिका से बने उपर्युक्त ३ चित्र हमें अभी प्राप्त हुए हैं। प्रथम चित्र कारागार में बन्द पैर में जंजीरें पड़े, पास में कमण्डल-पीछी रक्खे, चौकी पर पद्मासनस्थ-ध्यानस्थ बैठे भक्तामर-स्तोत्र की रचना करते आचार्य श्री मानतुंग का है। दूसरा, सिर पर मुकुट धारण किये; पीछे प्रभामण्डल युक्त; बायें हाथ में कलश-चित्रित गदा, दाहिने हाथ में पद्मपुष्प धारण किये; गले में माला, कानों में कुण्डल दोनों भुजाओं में भुजबन्द पहने; पीत वर्ण उत्तरीय व धोती पहने तथा नील वर्ण कछौटी बांधे सौम्य आकृति भक्त कामदेव हनुमान का है। और तीसरा, लम्बे-घुंघराले केशों वाले; बायें कन्धे पर सफेद किन्तु लाल बुन्दीदार उत्तरीय डाले; कटिबन्ध युक्त सुर्ख लाल अधोवस्त्र पहने, पद्मासनस्थ सुदर्शन स्वामी का है, जिनके दक्षिण पार्श्व में आगम कुआँ, बायें पार्श्व में कच्छा धारण किये एक बौना आदमी जो अपने सिर पर थाली में कुछ उठाये हुए है, पीछे जंगल के मध्य से प्रवाहित होती आती शुभ्रजला सरिता; ऊपर बायें कोने में खम्भों पर आधारित स्वस्तिक युक्त शिखरबन्द आकार, जिसे चित्रकार ने निर्वाण क्षेत्र अभिहित किया है; मध्य में सिद्धशिला पर आसीन सिद्ध भगवान द्वारा अमियकण वर्षण; और दाहिनी ओर विमानस्थ देवगण का दृश्य अस्पष्ट रूप से चित्रित हैं।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर से प्रेरणा प्राप्त; पटना कलम के विख्यात चित्रकार ईश्वरी प्रसाद वर्मा से चित्रकला-शिक्षा प्राप्त और वृद्धावस्था में चित्रकारिता की ओर अग्रसर सुबोध कुमार जी की तूलिका सतत चलती रहे और नित्य नये मनोरम चित्र हमें प्रदान करती रहे, यही हमारी कामना है।

श्री शिवशंकरस्तुतिमाला : रचयिता- श्री गया प्रसाद तिवारी 'मानस'; प्र. हिन्दी परिषद्, २२३, राजेन्द्रनगर, लखनऊ-४; प्र.सं. २८-६-२०००; पृ. २२+१२; मूल्य रु. ५/-

मानस विनयावली, मानस भक्ति भावांजलि और **श्रीदुर्गास्तुतिमाला** (परिचय शोधादर्श-४१ में पृ. १८२-१८३ पर प्रकाशित) की कड़ी में ब्रज भाषा और कहीं-कहीं भावानुरूप संस्कृत प्रधान शब्दों में; श्री शिव चालीसा, श्री शिवाष्टक तथा श्री शिव-स्तवन नामक तीन खण्डों में प्रसूत यह भक्तिपरक रचना रससिद्ध वयोवृद्ध कवि मानस जी की शिवभक्तों को अनुपम देन है।

उद्गार : रचयिता-डॉ. परमानंद जड़िया; प्र. 'मधुलिका-प्रकाशन', १८६/५१, खत्री-टोला, मशकगंज, लखनऊ-१८; प्र.सं. अक्टूबर, २०००; पृ. ५२; मूल्य रु. ५०/-

उर्दू साहित्य की लोकप्रिय विधा ग़ज़ल को हिन्दी में बखूबी प्रस्तुत करने वाले, हिन्दी

साहित्य की विविध विधाओं में अपनी लेखनी से प्रसूत अब तक ३८ कृतियां प्रकाशित करा देने वाले, **समर्थ** साहित्यकार डॉ. जड़िया का **दीपिका** और **गुलदस्ता** के उपरान्त यह तीसरा ग़ज़ल संग्रह है, जिसमें ४८ ग़ज़लें समाहित हैं। अपनी प्रथम ग़ज़ल में 'ग़ज़ल' को परिभाषित करते हुए उन्होंने लिखा है-

"बहरों में बद्ध प्रेम की अभिव्यक्ति है ग़ज़ल।
नयनों का नीर, वेदना अनुरक्ति है ग़ज़ल।।
विद्वेष झूठ छल कपट पाखण्ड से परे।
तन मन की गांठ जोड़ दे वह शक्ति है ग़ज़ल।
हिन्दू हो जैन पारसी सिख बौद्ध मुसलमां।
सबके ही रक्त रंग की आरक्ति है ग़ज़ल।।
मधुवन में गूंज भृंग की, कलियों की मृदु हँसी,
ईश्वर के पाद-पद्म में दृढ़ भक्ति है ग़ज़ल।।
'जड़िया' प्रशांत रस-प्रवण सुकुमार फूल सी,
अनगढ़ अगीत काव्य की परित्यक्ति है ग़ज़ल।।"

इस संकलन की विविध ग़ज़लों के माध्यम से डॉ. जड़िया ने समसामयिक विभिन्न विसंगतियों पर हृदयस्पर्शी चोट की है। ये ग़ज़लें पाठक का मन गुदगुदाती हैं और उसे कुछ सोचने को विवश करती हैं। इस सुन्दर प्रस्तुति के लिये डॉ. जड़िया साधुवादार्द्द हैं।

- रमाकान्त जैन

❑❑❑

महावीर सन्देश

जिसने जग के सब जीवों को, निर्भय जीवन का दान दिया।
मिथ्या भ्रम में भटकी जनता को, जिसने अनुपम ज्ञान दिया।।
खुद जियो, जगत को जीने दो, सुख शांति सुधारस पीने दो।
जिसने जग को यह मंत्र दिया, फिर बंधन मुक्त स्वतंत्र किया।।
उस परम पूज्य परमेश्वर का, सुन लो पावन उपदेश सखे।
हिंसा में धर्म नहीं रहता; है यही सुखद संदेश सखे।।

- (स्व.) फूलचन्द्र जैन 'पुष्पेन्दु'
(लखनऊ)

अभिनंदन

■ उ. प्र. हिन्दी संस्थान ने वर्ष १९९९ का पचास हजार रुपये का 'साहित्य भूषण सम्मान' अन्य के साथ **डॉ. सुनीता जैन** को देने की घोषणा की।

■ कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुरस्कार-१९९९ **डॉ. प्रकाशचंद्र जैन (इन्दौर)** को उनकी कृति 'हिन्दी के जैन विलास काव्यों का उद्भव और विकास (वि.सं. १५२० से १९०० तक)' पर प्रदान करने की घोषणा की गई।

■ १४ सितम्बर, २००० को राजेन्द्र सभागार, दिल्ली में यूनेस्को द्वारा आयोजित तृतीय सहस्राब्दि विश्व हिन्दी सम्मेलन में अन्य हिन्दी सेवियों के साथ पंजाब के हिन्दी सेवी **श्री पुरुषोत्तम जैन एवं श्री रवीन्द्र जैन** को **'राष्ट्रीय हिन्दीसेवी सहस्राब्दि सम्मान'** से सम्मानित किया गया।

■ ३० सितम्बर को रायबरेली में सम्पन्न उ.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन में **डॉ. जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल**, निदेशक वृन्दावन शोध संस्थान, मथुरा को आलोचना साहित्य में विशिष्ट योगदान हेतु **'आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी सम्मान'** से सम्मानित किया गया।

■ वर्ष २००० का **वाग्भारती पुरस्कार** डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर को प्रदान किया गया।

■ **पं. शिवचरनलाल जैन**, मैनपुरी को **गणिनी आर्यिका ज्ञानमती पुरस्कार-२०००** प्रदान किये जाने की घोषणा की गई।

■ **प्रो. हम्पा नागराजैय्या** को उनकी कृति 'A History of the Rastrakutas of Malkhed and Jainism' पर **ज्ञानोदय पुरस्कार-९९** प्रदान किये जाने की घोषणा की गई।

■ जोधपुर उच्च न्यायालय के ख्यातिलब्ध अधिवक्ता **श्री प्रकाश जी टाटिया** को राजस्थान उच्च न्यायालय का न्यायाधिपति नियुक्त किया गया।

■ प्राकृत एवं अपभ्रंश के ख्यातिप्राप्त विद्वान **डॉ. राजाराम जैन** (आरा) को इस वर्ष गणतन्त्र दिवस पर सन् २००० के 'राष्ट्रपति सहस्राब्दि-सम्मान पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। इसके अंतर्गत इन्हें पचास हजार रुपये की राशि प्रतिवर्ष आजीवन प्राप्त होती रहेगी। डॉ. दरबारीलाल जी कोठिया के उपरान्त यह सम्मान प्राप्त करने वाले जैन समाज के यह दूसरे यशस्वी विद्वान हैं।

■ **श्री महावीर प्रसाद जैन** (भू.पू. छात्र श्री टोडरमल सिद्धान्त महाविद्यालय) को उनके शोध प्रबंध 'डॉ. हुकमचंद भारिल्ल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय ने पी-एच. डी. उपाधि प्रदान की।

■ कोटा के उद्योगपति, ओम कोठारी फाउंडेशन के चेयरमैन तथा अ.भा. दिग.जैन महासभा के परम संरक्षक ७५ वर्षीय **श्री त्रिलोकचंद कोठारी** को उनके शोध प्रबंध 'दिगम्बर जैन समाज (वैचारिक विकास एवं सामाजिक दर्शन-बीसवीं शताब्दी का समीक्षात्मक अध्ययन)' पर कोटा खुला विश्वविद्यालय ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

■ **डॉ. उदिता शहा** (पुणे) को उनके शोध-पत्र "Emotional Healing" (भावनात्मक उपचार पद्धति) पर W.H.O. An Open International University for Medicines Alternatives, U.S.A., ने पी-एच.डी. उपाधि और स्वर्ण-पदक प्रदान किया।

■ ८ जनवरी, २००१ को कोलकाता में २४वें अन्तर्राष्ट्रीय ज्योतिष विद्या सम्मेलन में 'दिशा-बोध' के सम्पादक **डॉ० चिरंजीलाल बगड़ा** को भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति दिये गये उनके विशिष्ट योगदानों हेतु 'भारत माता पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

■ कोतमा में गोलापूर्व जैन समाज के विद्वान, समाजसेवी तथा मेधावी व्यक्तियों के सम्मान हेतु आयोजित चेतना-सम्मान-समारोह में सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध विद्वान **डॉ. पन्नालाल जैन, साहित्याचार्य (सागर)** को वर्ष १९९९ के 'चेतना श्री' सम्मान से; **पं० बाबूलाल जैन, प्रतिष्ठाचार्य** (टीकमगढ़) को वर्ष २००० के 'चेतना श्री' सम्मान से; **डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन** (बड़ामलहरा) को 'सेवा सम्मान' से तथा **डॉ. (श्रीमती) समता जैन** (दमोह) को 'प्रतिभा सम्मान' से सम्मानित किया गया।

■ तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के आजीवन सदस्य और इसकी प्रबंध समिति के सदस्य **श्री संदीप कान्त जैन** की नेशनल इन्श्योरेन्स कम्पनी में सहायक प्रशासनिक अधिकारी (प्रथम श्रेणी अधिकारी) पद पर पदोन्नति हुई।

■ पद्मश्री प्रो. **डॉ. महेन्द्र भण्डारी** को एक वर्ष बाद पुनः संजय गांधी आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ, के पूर्णकालिक निदेशक के प्रतिष्ठित पद का दायित्व सौंपा गया और उन्होंने ५ मार्च को कार्यभार ग्रहण किया।

उपर्युक्त सभी सम्मानित महानुभावों का उनकी उपलब्धि के लिये शोधादर्श परिवार अभिनंदन करता है और उन्हें अपनी शुभकामना प्रेषित करता है।

❑❑❑

शोक संवेदन

☐ १ दिसम्बर, २००० को दिल्ली में वहां के सुश्रावक एवं प्रतिष्ठित व्यवसायी **श्री कैलाशचन्द जैन**, राजा टॉयज वालों का निधन हो गया।

☐ ११ दिसम्बर को सकरार (झांसी) में सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध कवि **श्री हजारीलाल जी काका 'सकरार'** का स्वर्गवास हो गया।

☐ १८ दिसम्बर को माउण्ट आबू में श्रमण संघ के उपाध्याय प्रवर अनुयोग प्रवर्तक ८६ वर्षीय **मुनिश्री कन्हैयालाल 'कमल'** का देवलोक गमन हो गया।

☐ ३१ दिसम्बर को कोटा में वहां की दिगम्बर जैन समाज के अध्यक्ष प्रमुख समाजसेवी एवं प्रतिष्ठित व्यवसायी **श्री प्रकाशचंद पांड्या** का स्वर्गवास हो गया।

☐ २८ जनवरी, २००१ को सुजानगढ़ में **आर्यिका रोशनमती जी (टिकी बाई)** का समाधिमरण हो गया।

☐ २६ जनवरी को देहरादून में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के आजीवन सदस्य; स्वतंत्रता सेनानी; अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त स्काउट; अनेक समाजसेवी एवं शैक्षणिक संस्थाओं तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों के अध्यक्ष और देहरादून एवं लखनऊ से प्रकाशित 'रीजनल एक्सप्रेस न्यूज पेपर' के अध्यक्ष तथा भारत के विभिन्न राष्ट्रपतियों से समय-समय पर सम्मान प्राप्त ७८ वर्षीय **डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन** नहीं रहे।

☐ ३१ जनवरी को दिल्ली में ६० वर्षीया धर्मपरायणा धर्मपत्नी श्री सुखमाल चन्द्र जैन ने सद्गति के लिये जीर्ण देह का त्याग किया।

☐ ७ मार्च को जोधपुर में स्थानकवासी संघ के भीष्म पितामह, ८८ वर्षीय श्रावकरत्न **श्री धींगडमल जी सा. गिडिया** का देहावसान हो गया।

☐ ६ मार्च को सिद्धक्षेत्र कुण्डलपुर में अनेक पुराण ग्रन्थ एवं स्तोत्र संग्रहों के भाषानुवादक, जैन वांङमय के महान अध्येता तथा जैन विद्या के आमरण अवदानी, स्वनामधन्य विद्वान पंडित ९१ वर्षीय **डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य** का स्वर्गवास हो गया।

☐ 'राष्ट्रभाषा कोविद' विरुद से सुशोभित, ललितपुर की ८४ वर्षीया कवियित्री **श्रीमती कमला देवी जैन** (धर्मपत्नी स्व. परमेष्ठीदास जैन) का इस बीच निधन हो गया।

उपर्युक्त सभी दिवंगत के प्रति *शोधादर्श* परिवार अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, आत्मा की चिर शान्ति और सद्गति के लिये जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता है और स्वजनों-परिजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

शोधादर्शः पाठकों की दृष्टि में

☐ प्रस्तुत अंक अपनी विशिष्ट सामग्री के कारण अत्यन्त उपादेय है। शिव महिम्नः स्तोत्र विमर्श, पउमचरियं, खारवेल के हाथीगुम्फा शिलालेख सम्बन्धी लेख आदि, अन्य सामयिक सूचनायें तथा सम्पूर्ण ४२ अंकों की अनुक्रमणिका से अंक का महत्त्व द्विगुणित हो गया है।

– वेदप्रकाश गर्ग, मुजफ्फरनगर

☐ अंक देखकर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ। मन समाधान से भर उठा। आपश्री को "बीसवीं शताब्दी का रत्न" यह पुरस्कार और पदवी मिली। यह पढ़कर मन में उल्हास हुआ।

– शान्ति कुमार शहा, सांगली

☐ आप सभी परिवारी जनों की दृढ़ निष्ठा एवं सतत् अध्यवसाय से 'शोधादर्श' ने जैन पत्र-पत्रिकाओं में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। सम्पादक की स्पष्टवादिता श्लाघनीय है।

– डॉ. मालती जैन,
प्राचार्या, श्री चित्रगुप्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैनपुरी

☐ **शोधादर्श** का ४२ वां अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में कई शोधपूर्ण लेख पढ़े। महाकवि पुष्पदन्त के बारे में पढ़ा। ऐसा बताया जाता है कि उनका जन्म बस्तर में हुआ था। बस्तर से विदर्भ एवं आन्ध्र प्रदेश की सीमाएं लगती हैं। विद्वानों से पुष्टि करके आपको लिखेंगे। भाई शशिकान्त जी का 'अलविदा' नाम का आलेख पढ़ा, बहुत मार्मिक है। ऐसा लगता है कि हम लोग उनके लेखों से वंचित रहेंगे। उन्हें मेरी शुभकामनाएं और आशा है कि पत्रिका में उनके विचार पढ़ने को मिलेंगे।

– सनत जैन, रायपुर

☐ **शोधादर्श** आद्यान्त पढ़ा। विचारोत्तेजक है। निबन्ध शोध की दृष्टि से सराहनीय हैं।

– डॉ. एन. सुन्दरम्,
सम्पादक- सूर सौरभ
चेन्नई

☐ **शोधादर्श** ४२ आद्योपान्त पढ़ा- सदैव की भांति आपकी टिप्पणियां व लेख निर्भीकता से भरे सटीक होते हैं। पृ. २५६-२६३ पर डॉ. राजमल बोरा का पउमचरियं पर लेख; पृ. २७२-७३ तथा २७६-७७ पर 'साधु समाज में शिथिलाचार' पर विचार-बिन्दु;

पृ. २७४ पर श्री सुखमाल चन्द जैन के चिन्तन-कण; पृ. २७८-२८४ पर डॉ. शशिकान्त का 'जैन समाज का यथार्थ-बोध' तथा पृ. २८८-२९४ पर खारवेल के शिलालेख पर उनका शोध विमर्श; पृ. २९५ पर सत्य उजागर करने वाली रमाकान्त की क्षणिकायें; तथा पृ. ३०६ पर डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा के पिताश्री का समाधिमरण संस्मरण आदि सभी हृदयस्पर्शी हैं। अंक १-४२ की अनुक्रमणिका बनाने में कमाल की मेहनत हुई है। 'अलविदा' ३३९ पर पढ़कर दुख हुआ। आज कौन सी पत्रिका है जो शिथिलाचार के विरुद्ध सटीक लिखे **शोधादर्श, दिशाबोध, धर्ममंगल, अनेकान्त** के अलावा। सभी पैसा जुटाने में लगे हैं।..... चारों तरफ अंधकार में ज्योति पुंज फैलाने वाले अपने पिताजी के काम को चालू रखें।

– महावीर प्रसाद जैन सर्राफ,

नई दिल्ली

□ **शोधादर्श** का नया अंक मिला। एक ही बैठक में लगभग पूरा अंक पढ़ लिया। जब अन्त में आपके संपादकीय को पढ़ा तो कुछ अचरज में पड़ गया कि आपने **शोधादर्श** से विदा ही ले ली। समझ नहीं पाया आपने यह कदम क्यों उठाया ? इसी अंक से ज्ञात हुआ कि आपको 'बीसवीं शताब्दी रत्न' सम्मान से सम्मानित किया गया है। आपको बहुत-बहुत बधाई !

पृष्ठ २७६-२७७ पर पं. धन्यकुमार जी के लेख 'ज्वलन्त प्रश्न-मुनिचर्या पर' में अन्तिम दो पैरा सही नहीं हैं। मृत्यु या मरण अकाल भी होता है और ऐसा प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। विष भक्षण, शस्त्र प्रहार आदि से अकाल मरण होता है। आगे के पैरा में भी उनका कहना 'शास्त्र ज्ञान अज्ञानता का साधक है' सही नहीं है। यदि ऐसा ही है, तो वे स्वयं क्यों शास्त्र पढ़ते हैं तथा दूसरों को लेख क्यों लिखते हैं? उनकी क्रमबद्धपर्याय की अवधारणा न शास्त्रोक्त है और न ही वैज्ञानिक आधार पर सत्य है।

– डॉ. अनिल कुमार जैन,

अहमदाबाद

□ इस पत्रिका ने, अपने नाम के अनुरूप, विद्वत् समाज में एक ऐसी स्वस्थ छवि और प्रतिष्ठा बना ली है, जो सराहनीय तो है ही, अनुकरणीय भी है।

आजकल किसी पत्रिका के साथ अमुक सम्प्रदाय या संगठन विशेष का नाम स्वतः जुड़ जाता है। अथवा वह किसी सम्प्रदाय विशेष की ही पत्रिका कही/ मानी जाती है। लेकिन मुझे लगता है कि "शोधादर्श" ने ऐसी किसी साम्प्रदायिक छवि का ठप्पा अपने ऊपर नहीं लगने दिया, और सामाजिक एवं सामासिक दृष्टि से एक संतुलन बनाए रखा। यह किसी पत्रिका, विशेषकर शोध-पत्रिका, के लिए उपलब्धि की बात है। इस सबके लिए मैं आपको तथा अन्य सभी कार्यकर्ताओं को हार्दिक बधाई देना चाहता हूँ।

आपके द्वारा लिखित 'अलविदा' पढ़कर दुःखद आश्चर्य हुआ। कारण जो भी हों, अगर ऐसी स्थिति नहीं आती तो अच्छा होता।

– डॉ. कमलेश कुमार जैन,
उप निदेशक,
भोगीलाल लेहरचन्द इन्स्टीट्यूट
ऑफ इण्डोलाजी, दिल्ली

☐ **'शोधादर्श'** मुझे बराबर मिल रहा है। मुझे बहुत अच्छा लगा है। अनेक जानकारियों एवं शोधकार्य से भरा होता है। विभिन्न समाचार भी प्राप्त होते रहते हैं। श्रमण संस्कृति एवं 'शिव' के विषय में भी जानकारी प्राप्त हुई। 'भरत- शब्दयात्रा' एवं अन्य लेख, 'आदिपुराण में नारी का चित्रण' भी विद्वत्ता का बोध कराते हैं। सभी ज्ञानवर्धक हैं। भारतीय जैन मिलन एवं दिगम्बर जैन महासमिति के विषय में भी आपके विचार जाने। लगभग ठीक ही हैं।

आपको पानीपत में "बीसवीं शताब्दी रत्न" से सम्मानित किया गया। इसके लिये मेरी ओर से भी हार्दिक बधाई व शुभ कामनायें स्वीकार कीजियेगा। आजकल पंचकल्याणकों की बाढ़ सी लग रही है। एक वर्ष में अनगिनत ही होते हैं। पहले तो वर्ष में कहीं एक या दो ही हो पाते थे। हो सकता है आबादी बढ़ने से ही ऐसा हो, परन्तु लगता है अपव्यय कुछ अधिक होने लगा है इन कार्यों में। पता नहीं धर्मलाभ कितना होता है। दूसरे जैन समाज में रात्रि-विवाह अधिक होने लगे हैं, यह भी उचित नहीं लग रहे हैं। लगता है मार्गदर्शन या तो मिल नहीं रहा है और मिल रहा है तो सार्थक नहीं हो रहा है। परन्तु धन के अपव्यय का दुख होता है। लालकिले पर भी धन का अपव्यय हुआ था। वह भी चुभा था क्योंकि अहिंसा की रक्षा के नाम पर हुआ था।

– देवेन्द्र कुमार जैन,
पूर्व नगर एवं महानगर पार्षद, दिल्ली

☐ 'जैन समाज का यथार्थ-बोध' लेख बहुत ही सुन्दर, सारगर्भित एवं सुन्दर सुझावों को लिए हुए है। आपका समन्वय एवं उदार दृष्टिकोण ही आज जैन समाज की वृहत् आवश्यकता है। समाज पर सटीक एवं सुन्दर व्यंग किया है। आपकी लेखनी को साधुवाद!

– प्रकाश पालावत,
सम्पादक- सम्यक् विकास,
अहमदाबाद

☐ **शोधादर्श** – ४२ मिला। अर्धाधिक पढ़ गया हूँ। अच्छी सामग्री है।

– सुरेश जैन सरल
जबलपुर

☐ I received **Shodhadarsha.** It is a very scholarly attempt.

Swami Sunirmalanand,
Editor- Prabuddha Bharata
Champawat

☐ शोधादर्श का ४२ वां अंक प्राप्त हुआ। पठनीय सामग्री पाने के लिये अनुगृहीत हूँ। 'शिव महिम्नः स्तोत्र विमर्श' यह लेख बहुत ही ज्ञानवर्धक है। विशेषतः अमलेश्वर के लेख की बात पढ़कर बड़ी प्रसन्नता हुई, और जानकारी बढ़ी सो अलग। सुन्दर अंक प्रस्तुति और बढ़ती हुई मंहगाई में आपकी यह 'सारस्वत सेवा' प्रशंसा और बधाई की हकदार हैं।

– डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी,
वाराणसी

☐ **शोधादर्श** पढ़कर बहुत ज्ञान हमें प्राप्त हो गया। उसमें बहुत कुछ अच्छे लेख पढ़कर आनन्द हो गया।

– श्री प्रमोद पंडित,
सम्पादक- जिनदास (मराठी साप्ताहिक),
सांगली

☐ **शोधादर्श** ४२ को आद्योपान्त अवलोकित कर अत्यन्त आनन्दानुभूति हुई। इस उपादेय अंक में 'गुरुगुण-कीर्तन-महाकवि पुष्पदन्त', 'शिवमहिम्नस्तोत्र विमर्श, 'आदि पुराण में नारी चित्रण', 'खारवेल का हाथीगुम्फा शिलालेख' आदि लेखों का अच्छा समावेश है। 'शिवमहिम्नस्तोत्र' का सानुवाद मूलपाठ हृदयाकर्षक है। मूलपाठ में कहीं-कहीं मुद्रण सम्बन्धी त्रुटियां रह गई हैं। इस अंक के विविध स्तम्भ निस्सन्देह ज्ञानवर्धक और परम उपयोगी हैं। समासतः इस श्रेष्ठ अंक की प्रस्तुति हेतु सम्पादक मण्डल साधुवाद का सत्पात्र है। पत्रकारिता के व्यापक क्षेत्र में शोधादर्श श्रेष्ठ मानदण्ड स्थापित कर रहा है-यह प्रसन्नता की बात है।

– डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी,
प्राचार्य, एम. पी. कालेज, कोंच

☐ 'गुरुगुण-कीर्तन' के अन्तर्गत 'महाकवि पुष्पदन्त' के बारे में विस्तृत जानकारी देकर शोध करने का पथ-प्रदर्शन किया गया है। जो प्रशंसनीय है। इसी तरह 'जैन स्तोत्र साहित्य' लेख शोधपूर्ण होकर महत्वपूर्ण है। अंक की सम्पादकीय विचारणीय होकर अपना मत प्रदर्शित करने का संकेत देती है ताकि सुखद परिणाम पर पहुँचा जा सके। 'शिवमहिम्न स्तोत्र विमर्श' ध्यान से विचार करने व सोचने को बाध्य करता है। विचार बिन्दु पृ. २७२-२७३, २७६-२७७, २७८-२८४ में विभिन्न विषयों की महत्ता दर्शाकर चिन्तन

हेतु जिज्ञासा जगाने का कार्य सराहनीय है।

इसी प्रकार चिन्तन-कण विभिन्न विषयों के बारे में जानकारी देकर गंभीरता से सोचने हेतु प्रेरित करते हैं। रमाकान्त जैन की क्षणिकाएं अच्छी बन पड़ी हैं। साहित्य-सत्कार के अन्तर्गत दी गई विभिन्न समीक्षात्मक टीपें लोगों को पुस्तकें देखने की ललक जगाती हैं। अभिनन्दन, समाचार विविधा, शोक संवेदन आदि साहित्य क्षेत्र के मानदण्ड समझने हेतु जानकारी के तौर पर भी महत्वपूर्ण हैं। अनुक्रमणिका **शोधादर्श** १-४२ सारी स्थिति एक दृष्टि में जानने हेतु उपयोगी है, यह सन्दर्भ का काम अच्छा कर सकती है। इस प्रकार यह अंक सभी दृष्टि से महत्वपूर्ण हो गया है और पत्रिकाओं के बीच **शोधादर्श** की पृथक् पहचान बनाता है।

– मदन मोहन वर्मा,
ग्वालियर

☐ **शोधादर्श** ४२ के सभी स्तम्भ देखे। लेख ज्ञानवर्द्धक तो हैं ही अंक जैन समाज की घटनाओं का एनसाइक्लोपीडिया जैसा लगता है। **शोधादर्श** की अनुक्रमणिका १-४२ अपने आप में अनूठी और अभी तक के सृजन की सार्थकता की सूचक है। **शोधादर्श** के सम्पूर्ण कृतित्व को पुस्तकाकार रूप में संयोजित कर उसका प्रकाशन जैन इतिहास एवं विचारों की अमूल्य निधि होगी।

'सम्पादकीय-अलविदा' दो बार पढ़ा। आपके विचारों ने हृदय को छू लिया। आपकी श्रम-साधना, समर्पण को नमन! आपकी क्षतिपूर्ति होना दुर्लभ है। पत्रिका आपका मार्गदर्शन पाती रहे, यही भावना है।

– डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल,
अमलाई

☐ **शोधादर्श** ४२ अभी मिला। श्री अजित प्रसाद जी, रमाकान्त जी एवं स्वयं आपने **शोधादर्श** के माध्यम से डॉ. ज्योति प्रसाद जी की ज्योति को जीवन्त बनाये रखा है। जैन पत्रकारिता को सही दिशा दी है। आप लोगों के अथक प्रयत्नों से अनुसन्धान के क्षेत्र में **शोधादर्श** अपना स्थान बना चुका है।

आपका 'अलविदा' सम्पादकीय शोधादर्श के लिए कार्यकारी नहीं है। उसे आपकी जरूरत है। जैन विद्या को आपकी तटस्थ अनुसन्धान दृष्टि की निरन्तरता चाहिए।

– डॉ. ऋषभचन्द्र जैन,
वैशाली

☐ **शोधादर्श** ४२ अन्ततः सम्पूर्ण पढ़कर ही छोड़ने का मन हुआ– सदा की भांति यह

अंक भी पठनीय, मननीय, विचारणीय और प्रेरणास्पद है। सम्पादकीय एवं समाचार विमर्श बहुत पसन्द आये। 'साधु समाज में फैलता शिथिलाचार' और 'ज्वलन्त प्रश्न-मुनिचर्या पर' भी ठीक लगे। 'भाषा समिति का विचित्र पालन' निश्चित रुप से हमे चेताने व जगाने वाली बात है। आज जो भाषा समिति का उल्लंघन देखा जा रहा है, वह चिन्तनीय है। नन्दीश्वर भगवान का अभिषेक करवाकर आखिर किस नवीन परम्परा की शुरुवात करने का विचार है? आज हमारे विद्वानों की स्थिति भी चिन्तनीय है। जो जिनवाणी के संरक्षण, संवर्धन और प्रभावना के लिए माँ सरस्वती के पुत्र माने जाते हैं, वे भी आज समाज को एकता की जगह विघटन जैसी स्थिति में लाने पर उतारु हैं, मात्र अपने थोड़े से स्वार्थ, मान-सम्मान की पूर्ति के लिए। पहले विद्वत् परिषद अब शास्त्री परिषद का विवाद वरिष्ठ विद्वानों में छिड़ गया है, आखिर ऐसा क्यों? **शोधादर्श** इस ओर बहुत अच्छा कार्य कर रहा है।

– सुनील जैन 'संचय' शास्त्री,
नरवां (सागर)

☐ **शोधादर्श** ४२ में 'बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर' विषयक सम्पादकीय आद्योपान्त पढ़ा। उसमें दी गई हिदायतें प्रशंसनीय हैं।

डॉ. शशिकान्त की 'शिवमहिम्न स्तोत्र' पर टिप्पणी प्रेरक है। वास्तव में वैदिक परंपरा के **ईशान संहिता, भागवत** आदि में 'आदिनाथ' ही शिव रूप में हैं। शिव रूप उनका रूपकात्मक है, यह उल्लिखित हैं। सन् १९५७ में प्रकाशित अ.वि. जैन मिशन के भ. ऋषभदेव विशेषांक में डॉ. कामता प्रसाद जैन ने इसे सविस्तार सिद्ध किया है, यथा (१) त्रिशूल-जैन धर्म का रत्नत्रय, (२) नंदि वाहन-ऋषभदेव का लांछन (चिन्ह) बैल, (३) कैलाश निवास- ऋषभदेव की निर्वाण भूमि कैलाश, (४) अर्द्धनारी नटेश्वर- नाभि की कुंडलिनी में ध्यान की एकाग्रता तथा (५) मल से निर्मित गणेश मानसपुत्र आदिनाथ भगवान के गणधर जो उनका उपेदश धारण कर उसे जगत् को आगम के रूप में देने वाले विद्या के देवता हुए, आदि।

श्री गुलाबचंद जैन का 'साधु समाज में फैलता शिथिलाचार' लेख समयोचित है। पर इसमें दी गई हिदायतें धन के लोभवश बेअसर सिद्ध होने की ही संभावना अधिक है।

भ. महावीर के २६०० वें जन्म कल्याणक महोत्सव के प्रसंग में जो गंभीर चिन्तन डॉ. शशिकान्त ने 'जैन समाज का यथार्थ-बोध' में प्रस्तुत किया है, उस पर समाज में मन्थन होना चाहिए और स्वीकार्यता के स्तर पर उसे लाना चाहिए।

– मनोहर मारवडकर,
नागपुर

☐ विदेश से लौटने पर **शोधादर्श** के अंक ३६ से ४२ एक साथ देखने को मिले। सामाजिक, धार्मिक विषयों एवं समस्याओं पर आपकी विचारोत्तेजक टिप्पणियां एवं तर्कसंगत सारगर्भित विचार तथा **शोधादर्श** की निष्पक्षता, स्पष्टवादिता, निर्भीकता, आदि के विषय में पहले भी लिख चुका हूँ।

बदरीनाथ धाम के संबंध में जैनेतर लोगों ने जो कुछ भी कहा है, वह प्याले में तूफान ही समझा जाना चाहिए। पर नए **उत्तरांचल प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री द्वारा जो कुछ कहा गया है वह निश्चय ही उन जैसे व्यक्ति के लिए अशोभनीय है** तथा इस बात का द्योतक है कि **इस प्रकार के गैर जिम्मेदाराना और असंवैधानिक वक्तव्य देकर वे स्वयं अपनी छवि धूमिल कर रहे हैं। जैन समाज की शान्तिप्रियता, सहनशीलता तथा दूसरे धर्मों के मामले में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न करने का ही परिणाम है कि आज तक जैनेतर लोग कोई भी ऐसा उदाहरण नहीं दे सके हैं कि जिससे जैन समाज पर कोई उंगली भी उठा सके। शोधादर्श** के इस मत से शायद ही कोई असहमत हो कि **देश के किसी भी भाग में विधिवत खरीदी गई जमीन पर अपनी ही उपासना के लिए अपने धर्मानुसार मन्दिर/मूर्ति की स्थापना करने का अल्पसंख्यक किसी भी धर्मावलम्बी का धार्मिक अधिकार है।**

पृष्ठ २७८ पर 'विचार बिन्दु' के अन्तर्गत भारतीय जैन मिलन के संबंध में जो कुछ लिखा है, उस पर अभी तक मिलन के किसी भी पदाधिकारी/ सदस्य आदि का ध्यान क्यों नहीं गया? क्या मिलन के सभी प्रज्ञा-बुद्धि वाले शिष्टजन भेड़ियाधसान हैं जो अध्यक्ष या मंत्री का कुछ भी कहा या लिखा गया आप्तवचन मानते हैं? जैन मिलन का घोषित उद्‌देश्य समाज के सभी वर्गों (श्वेताम्बर-दिगम्बर दोनों) को एक सूत्र में बांधना रहा है, पर व्यवहार में मिलन के कुछ ऐसे पदाधिकारी एवं सदस्य भी हैं जो कुछ ऐसी संस्थाओं से संबद्‌ध हैं जिनका घोषित उद्‌देश्य एवं नीति जैन मिलन के उद्‌देश्य एवं नीति के विपरीत है। पर मिलन ने उनकी संरक्षकता/सदस्यता केवल इस कारण स्वीकार की है कि वे अपने नगर एवं समाज के प्रभावशाली एवं धनीमानी व्यक्ति हैं।

'विचार बिन्दु' में 'भगवान महावीर के २६०० वें जन्म कल्याणक महोत्सव' पर टिप्पणी में पृ. २८० पर 'प्रकाशन' के अन्तर्गत A Comprehensive Bibliography of Jainisn को भी शामिल किया जाय। यह ग्रन्थ सूची ऐसी हो जिसमें जैन धर्म (और महावीर) सम्बन्धी किसी भी भाषा में, किसी भी रूप में उपलब्ध सामग्री शामिल हो। इसमें केवल वह सामग्री ही नहीं हो जो हमें स्वीकार्य हो, वरन् ऐसी सामग्री भी शामिल हो जिसमें नकारात्मक विचार हों यानी जैन धर्म के सम्बन्ध में किसी भी दृष्टि से आपत्तिजनक बातें कहीं गई हों। कितनी शर्म की बात है कि आज देश में कहीं भी ऐसा कोई 'जैन संदर्भ

पुस्तकालय' नहीं है जहाँ किसी को जैन धर्म सम्बन्धी पूरी जानकारी मिल सके।

समाज में अभी जो सैकड़ों पत्र-पत्रिकाएं निकल रही हैं (जिनमें से अधिकांश केवल ८ या १० पृष्ठों की और आत्मप्रशंसा से भरी होती हैं) और उनके प्रकाशन में जो अपव्यय हो रहा है, उनके स्थान पर यदि **शोधादर्श, दिशाबोध, तीर्थंकर** जैसी कुछ गिनी-चुनी पत्रिकाएं ही निकलें, तो समाज में निश्चय ही क्रान्ति आयेगी। समाज की नई एवं युवा पीढ़ी की सांस्कृतिक-धार्मिक चेतना के लिए यह आवश्यक है।

- महेन्द्र राजा जैन,
इलाहाबाद

☐ **शोधादर्श** का बयालीसवाँ अंक मिला। पढ़कर दुख हुआ कि डॉ. शशिकान्त ने तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., तथा **शोधादर्श** के सम्पादक मण्डल से अपने को पृथक् कर लिया। डॉ. शशिकान्त तथा रमाकान्त जैन अपने स्वनामधन्य पिता डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के पद चिन्हों पर चलते हुए जैन धर्म के इतिहास, दर्शन तथा सिद्धान्तों की अनवरत खोज, व्याख्या तथा मीमांसा करने में लगे रहे हैं। संस्थाएं तथा पत्र-पत्रिकायें यों तो प्रजातांत्रिक आधार पर सबके सहयोग से आगे बढ़ती हैं, परन्तु कुछ लोगों की विशिष्ट भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। डॉ. शशिकान्त विशिष्ट विद्वान तथा खोजी पुरुष हैं। **शोधादर्श** उनके सहयोग के बिना कैसे चलेगा यह तो भविष्य ही बतायेगा। उन्होंने अपने कार्यकाल का सम्पूर्ण विवरण **शोधादर्श** ४२ में देकर अत्यधिक परिश्रम किया है। जैमिनी अकादमी पानीपत द्वारा उन्हें 'बीसवीं शताब्दी रत्न' की उपाधि से सम्मानित किया गया, एतदर्थ मेरी ओर से उन्हें हार्दिक बधाई!

- डॉ. परमानन्द जाड़िया,
लखनऊ

☐ **शोधादर्श मिला,** सामग्री का चयन अनुपम है। वे सभी राष्ट्रीय मुद्दे उठाये हैं जो जैन समाज के इर्द गिर्द गहराते जा रहे हैं। जैन समाज अपनी मौलिक अस्मिता खोता जा रहा है, यह एक ज्वलंत समस्या है। इसके समाधान और स्थितिकरण के लिए हमारा नेतृत्व नकारा बना आँखें मूंदे बैठा है। श्रेष्ठी और श्रमण की जुगलबंदी से जो कुछ विनाश हो रहा है उसकी भरपाई अगले सौ साल में भी संभव नहीं है। **शोधादर्श** आदर्श स्थापित कर रहा है। बाबूजी के मार्ग को आप प्रशस्त कर रहे हैं यही सच्ची श्रद्धाञ्जलि है।

- डॉ. अभय प्रकाश जैन,
ग्वालियर

☐ **शोधादर्श** (नवम्बर २०००, अंक ४२) का अध्ययन किया। डॉ. शशिकान्त जी, श्री रमाकान्त जैन के लेख हमेशा पठनीय रहे हैं। जैन साधुओं के गिरते स्तर पर मन

व्यथित होता है। आचार्य सन्मति सागर जी की प्रेरणा से निर्मित शिवपुरी का दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ मन्दिर इन्हीं आचार्य श्री के कारण शादी विवाह हेतु दिया जा रहा है। 'विचार-बिन्दु' में श्री गुलाब चन्द्र जैन विदिशा का लेख 'साधु समाज में फैलता शिथिलाचार' व पं. धन्य कुमार जैन का लेख 'ज्वलन्त प्रश्न-मुनिचर्या पर' अच्छे लगे। विवेकशून्य श्रद्धा ही दिगम्बर मुनि मार्ग को बिगाड़ रही है। अन्ध भक्त श्रावक व विद्वान, गुण-दोष का विचार किये बिना मात्र शरीर की नग्नता को ही पूज्य मान लेते हैं। मेरा अन्ध मुनिभक्त जैन मनीषी विद्वानों से निवेदन है कि दिगम्बर जैन साधुओं के मूलगुणों की पहचान करके ही श्रद्धा रखें व धर्म की रक्षा हेतु पथ-भ्रष्ट मुनियों पर कठोर कदम उठाएं।

- वैद्य राजेश चन्द्र जैन
अलीगंज (जिला एटा)

☐ पक्ष व्यामोह रहित तथ्य उजागर करने की **शोधादर्श** की साहसिक प्रवृत्तियां अभिनन्दनीय हैं। पत्रिका के सभी स्तम्भ आगम के पठन से उपजी कुछ शंकाओं व उन पर सटीक मननीय टिप्पणियों द्वारा ज्ञान की नवीन दिशाएं प्रदान करते हैं। प्राचीन आर्ष ग्रन्थों के ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक भावपूर्ण समन्वयात्मक प्रस्तुतीकरण जिज्ञासाओं को तुष्टि प्रदान करता है।

'जैन समाज का यथार्थ-बोध' लेख चिन्तनप्रद है। खारवेल का हाथी गुम्फा शिलालेख पुरातत्व प्रेमियों के समक्ष शोध-खोज की नवीन दिशाएं प्रस्फुटित करते हैं।

शोधादर्श का प्रस्तुत अंक हृदय को हर्ष एवं विषाद दोनों प्रदान करता है। जहाँ डॉ. शशिकांत जी को 'बीसवीं शताब्दि रत्न' सम्मान से सम्मानित किया जाना हृदय को आनंदप्लावित करता है, वहीं 'अलविदा' हृदय को संतप्त करता है। डाक्टर साहब का क्षीर-नीरवत **शोधादर्श** से एकत्व क्या उन्हें पत्रिका से अलग रख सकेगा और क्या शोधार्थी लेखक व पाठक इसे स्वीकार करेंगे?

- गुलाब चंद्र जैन,
विदिशा

☐ आपने **शोधादर्श** ४२ में पृ. २६४ पर संघ भेद का समय सं. १३६ दिया है, किंतु इसके पूर्व (i) **पउमचरियं** में श्वेताम्बर पंथ के विचार कैसे? (ii) कारंजा (लाड) में मिली पट्टावली में सं. ८६-विशाखनन्दि के साथ श्वेताम्बर उत्पत्ति यह भी कैसा? तथा (iii) आ. कुन्दकुन्द के ग्रन्थ में वस्त्रवाद का कथन कैसा?

- नेमचंद धन्नुसा जैन,
देऊलगांव राजा

(*टिप्पणी*- **शोधादर्श** ४२ में पृ. २६४ पर "दिगम्बर-श्वेताम्बर का औपचारिक संघ भेद ७६-८२ ई. में हुआ था" उल्लिखित है। इस सम्बन्ध में आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज द्वारा लिखित **जैन धर्म का मौलिक इतिहास** (द्वितीय भाग) के पृ. ६०८-६१२ दृष्टव्य हैं, जिसके अनुसार दिगम्बर परम्परा में देवसेन सूरिकृत **भावसंग्रह**, हरिषेण के **वृहत्कथाकोष** और रत्ननन्दी रचित **भद्रबाहु चरित** में आये उल्लेख कि श्वेताम्बर मत विक्रम नृपति की मृत्यु से १३६ वर्ष पश्चात (अर्थात् ७६ ई. में) प्रचलित हुआ तथा श्वेताम्बर परम्परा में जिनभद्रगणी क्षमाश्रमण के इस कथन कि "वीर निर्वाण से ६०६ वर्ष बीतने पर (अर्थात् ८२ ई. में) रथवीरपुर में बोटिक मत (दिगम्बर मत) की उत्पत्ति हुई" के आधार पर दिगम्बर-श्वेताम्बर भेद की दोनों परम्पराओं में मान्य ये तिथियां दी गई हैं। जहाँ तक विमलसूरि के **पउमचरियं** (जिसका रचनाकाल स्वयं कृतिकार के अनुसार वीर निर्वाण के ५३० वर्ष बाद अर्थात् ३ ई. है) में श्वेताम्बर पंथ के विचार कैसे का सम्बन्ध है, **श्रीमद् राजेन्द्रसूरि स्मारक ग्रन्थ** में "विमलार्य और उनका पउमचरियं" शीर्षक से प्रकाशित लेख में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने इस पर प्रकाश डाला है। - **रमाकान्त जैन)**

☐ **शोधादर्श** ४२ देखने के बाद उसका अंतरंग नया टाईप देखकर मुझे अतीव हर्ष हुआ। अंक की लेखन सामग्री भी अच्छी है। अंक देखते-देखते पृष्ठ ३३८ तक आया और डॉ. शशिकान्त का 'अलविदा' पढ़ने के बाद बहुत रंज हुआ और लगा ऐसा होना नहीं चाहिए था।

- के. डी. मिश्रीकोटकर,
चान्दुर बाजार (जि. अमरावती)

☐ **शोधादर्श** ४२ के सम्पादकीय में आपने सामयिक प्रसंग उठाया है। आज जिस तरह के खर्चीले, भड़कीले आयोजन और निर्माण जैनियों द्वारा किये जा रहे हैं उनसे अन्य समाजों में दुर्भावनाएं पनप रही हैं। हमें इस दृष्टि से आत्मावलोकन करना चाहिए कि हम दूसरों की नज़रों में अपराधी तो नहीं बन रहे हैं। हमें दिखावे के बजाए ठोस कार्य योजनाऐं विकसित करनी होंगी जो समग्रतः समाज के उत्थान की कारक बनें।

'विचार बिन्दु' के अन्तर्गत श्री गुलाब चन्द्र जैन का "साधु समाज में फैलता शिथिलाचार" पढ़ा। श्रमण रूपी नाव डगमगा रही है। आज हर साधु-आचार्य भीड़भाड़ प्रिय हो रहा है। उसे अपने चित्र प्रकाशित कर लोकेषणा पूर्ति का मार्ग अधिक प्रिय लग रहा है। हमारी संस्थायें या तो धर्म प्रभावना के नाम पर ऐसे कार्यों का समर्थन कर रही हैं या मौन रहकर तटस्थ हैं जो उचित नहीं है। 'भेष वैरागी का और आचरण रागी का' यह कथन है मुनिचर्या पर पं. धन्य कुमार जी सिहोरा का। आखिर क्या कारण है कि मुनि शिथिलाचार पर निर्णायक कदम उठाने के बजाय हम उपगूहन और स्थितिकरण को ही आदर्श मान बैठते हैं ?

'जैन समाज का यथार्थ-बोध' में भारतीय जैन मिलन के क्षेत्रीय अध्यक्ष द्वारा प्रेषित विज्ञप्ति का सम्यक् विश्लेषण किया गया है। महासमिति के अध्यक्ष द्वारा जारी पुस्तिका मुझे भी मिली थी। मैने उन्हें तुरन्त कुछ प्रतिप्रश्न विचारार्थ भेजे थे जिनका उत्तर आज तक प्राप्त नहीं हुआ। २० वीं सदी में दीक्षा उन्माद सदैव याद रहेगा। वास्तव में यह सच्चाई है, लेकिन धर्मान्धता के कारण इसकी उपेक्षा ही होगी।

– दामोदर जैन,
टीकमगढ़

☐ **शोधादर्श** ४२ प्राप्त हुआ। **शोधादर्श** ने निश्चय ही सामाजिक तथा धार्मिक जागरुकता बनाये रखने में प्रतिमान स्थापित किये हैं। सम्पादकीय में पृ. २४५ पर बहुत सही लिखा है, "जैन समाज को अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षार्थ.........गंभीरता पूर्वक पुनः विचार करना होगा।" सन् १९९२ में तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री पी. वी. नरसिम्हा राव के समय में लागू राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग (यहां 'आयोग' शब्द से आशय कदाचित् 'अधिनियम' से है-सं.) की धारा (२) द्वारा अल्पसख्यकों की इससे पूर्व की स्थिति में परिवर्तन आ गया। इस धारा में अल्पसंख्यकों की अलग पहिचान के लिए कोई दिशा निर्देश नहीं हैं वरन् इस संदर्भ में सरकार के स्व निर्णय को पूर्ण अधिकार दे दिया गया। तदनुसार सरकार द्वारा २३-१०-९३ को अल्पसंख्यकों की जो सूची जारी की गई उसमें केवल पांच धर्मों (मुसलमान, ईसाई, सिख, बौद्ध व पारसी) का नाम था। इससे न केवल जैनों का वरन् सभी धार्मिक अल्पसंख्यकों के अधिकारों का हनन हुआ। श्वेताम्बर समाज को जो समस्यायें इस समय बदरीनाथ जी में आ रही हैं वे नई नहीं हैं। हिन्दू समाज जो कि अपने को सहिष्णु कहता है, भारत के अन्य अल्पसंख्यक समाजों के प्रति बिल्कुल सहिष्णु नहीं है। बद्रीनाथ के हिन्दू मठाधीशों ने दिगम्बर जैन समाज को भी जैन धर्म के नाम पर बद्रीनाथ में स्थापित होने में बाधाएं उत्पन्न की थीं।

शिवमहिम्न स्तोत्र के संदर्भ में डॉ. शशिकान्त जी की यह टिप्पणी सही है कि "विशुद्ध बौद्धिक दृष्टि से 'शिव' और 'ऋषभ' आदि पुरुष या आदि देव के रूप में प्रतीक स्वरूप प्रतिष्ठित हैं।" श्री वेद प्रकाश गर्ग ने भी "भरतः शब्द-यात्रा" में **मत्स्य पुराण** के संदर्भ की बहुत सही व्याख्या की है जो अन्य उहापोह का निरसन करती है।

श्री गुलाब चन्द जैन ने हमारे साधु समाज के सन्दर्भ में जो कुछ लिखा है वह किसी से छिपा नहीं है। अपरिग्रह की मान्यता वाले धर्म के परिग्रही साधुओं को देखकर माथा शर्म से झुक जाता है। मुनिचर्या पर कुछ प्रश्न पं. धन्यकुमार जी ने भी उठाये हैं। मुनियों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली पीछी की उपयोगिता शुचिता के लिए केवल रजोहरण (झाड़ू) के रूप में ही होनी चाहिए, परन्तु अपरिग्रही मुनियों ने इसे परिग्रह का रूप दे दिया।

बड़ी-बड़ी, भारी-भारी पीछियां ग्रहण की जाती हैं जिसका कोई औचित्य नहीं है। पीछी के बिना अनुपयोगी हुए परिवर्तन करने का भी कोई अर्थ नहीं है। पीछी को अनुयायी के सिर पर रखकर आशीर्वाद देने का क्या महत्व है, मैं नहीं जानता, परन्तु इतना अवश्य है कि आशीर्वाद के लिए हाथ की महत्ता समाप्त होती जा रही है। मुनियों को इन सब पर विचारकर पीछी के उपयोग में संयम बरतना चाहिए। पीछी के लिए मयूरपंख के अतिरिक्त और कोई अच्छा विकल्प मिल पाता तो अच्छी बात थी।

पंडित जी की आत्मघात की प्रवंचना से मैं बिल्कुल सहमत नहीं हूँ। आत्मघात करने वाला व्यक्ति क्षणिक आवेश में आत्महत्या करता है अथवा किसी कुटिल उद्देश्य के लिए किसी व्यक्ति द्वारा प्रेरित होता है, ऐसा मनोवैज्ञानिक मानते हैं। अतः समाधिमरण को आत्मघात बतलाना उचित नहीं है। पंडित जी का सम्यक्ज्ञान के संदर्भ में कथन भी भ्रामक हैं। उन्होंने आत्मा की स्वतन्त्रता का निषेध कर दिया है जबकि जैन दर्शन के अनुसार आत्मा पूर्ण स्वतन्त्र है।

'विचार-बिन्दु- जैन समाज का यथार्थ-बोध' के अन्तर्गत डॉ. शशिकान्त जी ने २६०० वें जन्म कल्याणक महोत्सव समिति को बहुत ही उत्तम विचार भेजे हैं। 'भगवान महावीर की जीवनी' तथा उनका 'भारतीय संस्कृति में अवदान' दोनों ही महत्वपूर्ण विषय हैं। इन पर बिना किसी पूर्वाग्रह के शोध तथा समाधान आवश्यक है। मधु के सम्बन्ध में डॉ. साहब के विचारों से मैं सहमत नहीं हूँ। मधु मक्खी पालन कुटीर उद्योग अवश्य है, परन्तु जिन प्लेट्स में छत्ते तैयार होते हैं उनसे सेंट्रीफ्यूज मशीन द्वारा मधु अलग किया जाता है। छत्तों में मधुमक्खी के अण्डे तथा लार्वा भी रहते हैं। मधु अलग होने पर यह अण्डों तथा लार्वा युक्त सह-उत्पाद मक्खी का मोम कहलाता है। अतः मधु को अहिंसक उत्पाद मानना उचित नहीं है। हाँ वर्तमान परिस्थितियों में पशुओं का दूध उपयोग में लाना भी उचित नहीं जान पड़ता है। दिगम्बर जैन महासमिति के अध्यक्ष श्री प्रदीप जैन कासलीवाल के विचारों के सन्दर्भ में डॉ. साहब का विचार "कोई संगठन बने और वह भी मात्र दिगम्बर जैनों का-मेरे विचार से उपादेय नहीं होगा" उचित है।

श्री रमाकान्त जी ने 'सामयिक परिदृश्य' में बहुत ही चुटीली क्षणिकायें दी हैं। यदि इन क्षणिकाओं का थोड़ा भी प्रभाव पड़े तो हम सभी के वैचारिक स्वास्थ्य के लिए उत्तम होगा तथा इनकी सार्थकता होगी।

डॉ. शशिकान्त जी ने जो कुछ 'अलविदा' में लिखा है उससे ऐसा लगता है कि उनका व्यक्तिगत चिन्तन 'शोधादर्श' के चिन्तन से अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। 'शोधादर्श' से विदा लेने का कोई औचित्य समझ में नहीं आया और न ही अपने सम्पादकीय में इसे उन्होंने

स्पष्ट किया है। अच्छा होता डाक्टर साहब 'शोधादर्श' व समिति से विदा न लेते तथा प्रखर चिन्तक के रूप में अपनी सहभागिता बनाये रखते।

– आदित्य जैन,
लखनऊ

☐ शोधादर्श ४२ के पन्ने पलट रहा था कि 'अलविदा' सम्पादकीय दृष्टिपथ में आ गया। बुरा लगा। आप क्यों शोधादर्श से विलग हो रहे हैं ? देखें, आजतक न तो परम आदरणीय बाबूजी को देखा, न अजित प्रसाद जी को न आपको, न रमाकान्त जी और न ही नलिनकान्त जी को। किन्तु **शोधादर्श** की निष्पक्ष दृष्टि ने, लेखन ने, साहित्य सेवा ने मुझे आकृष्ट किया है।

– मोती लाल 'विजय'
कटनी

☐

अलविदा कह रहे तुम किस से,
जुड़े रहे तुम जिसके जन्म से।
रोंपा, सींचा और किया पल्लवित-पुष्पित,
अब मुँह मोड़ रहे उससे।।
भला कोई माली हो सकता निर्मम
मुँह मोड़े अपने लगाये पादप से।
इसकी हर साँस में बसे तुम,
कैसे कह दें अलविदा तुम से।।

– शोधादर्श

☐☐☐

आभार

अपने पूज्य पिताजी इतिहास-मनीषी, विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन की ८९वीं जन्म जयन्ती पर डॉ. शशिकान्त और श्री रमाकान्त जैन ने शोधादर्श को ५१ रु. भेंट किये।

☐☐☐

आवश्यक सूचना

वर्ष २००१ का वार्षिक शुल्क ५० रु. (पचास रुपये), यदि अभी नहीं भेजा हो, तो कृपया मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६ ००४', को शीघ्र ही भेजने का अनुग्रह करें। चेक अथवा ड्राफ्ट न भेजें। एक प्रति का मूल्य २० रु. (बीस रुपये) है।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिएं। यथासंभव लेख ३-४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। **लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें।**

शोधादर्श में समीक्षार्थ पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की **दो प्रतियां** भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु **शोधादर्श** का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों /न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

- प्रधान सम्पादक

❑❑❑